केंद्रीय सर्वेक्षण के माध्यम से राज्य

वी.

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी।

(आपराधिक अपील सं। 1300-1302 2023 का)

अप्रैल 28,2023

[सूर्या कान्ट और जे. बी. पारदीवाला, जे. जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-एसएस। 169 , 173 (2) , 173 (8) - आगे की जाँच कि क्या उच्च न्यायालय में न्यायसंगत था

कथित अपराधों के लिए अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ सी. बी. आई. द्वारा शुरू किए गए पूरे अभियोजन को इस आधार पर रद्द करना कि सी. बी. आई. धाराओं की उप धारा (8) के तहत आगे की जांच नहीं कर सकती थी। 173 दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 और एक बार पहले से ही धाराओं की उप-धारा (2) के तहत एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद एक आरोप पत्र दायर किया। 173 सी. आर. पी. सी. (समापन रिपोर्ट) का आयोजनः यू/एस के तहत आगे की जांच करने के खिलाफ कोई रोक नहीं है।

173 (8) अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद सी. आर. पी. सी. 173 (2) सी. आर. पी. सी. को स्वीकार कर लिया गया है-आगे करने से पहले

यू/एस जांच करें। 173 (8) मजिस्ट्रेट के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए आदेश की समीक्षा करे या उसे वापस ले, आगे की जांच केवल पहले की जांच की निरंतरता है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्तों की दो बार जांच की जा रही है-इसके अलावा, जांच को अभियोजन और सजा के बराबर नहीं रखा जा सकता है ताकि यह संविधान के अनुच्छेद 20 के खंड (2) के दायरे में आए। 173 (8) सी. आर. पी. सी.-उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेशों को दरकिनार कर दिया गया।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - s.173-आगे की जांच के कारण मुकदमे में देरी-आयोजितः यह तय कानून है कि

आपराधिक अपराध को राज्य और समाज के खिलाफ गलत माना जाता है, भले ही यह किसी व्यक्ति के खिलाफ किया गया हो-आम तौर पर, गंभीर अपराधों में, राज्य द्वारा अभियोजन शुरू किया जाता है और न्यायालय को केवल देरी के आधार पर अभियोजन को खारिज करने की कोई शक्ति नहीं होती है-केवल न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में देरी।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-एसएस। 169 , 173 – के बीच अंतर-सी. आर. पी. सी. की धारा 169 को रिपोर्ट देने में मौन है मजिस्ट्रेट, हालांकि जांच अधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत मजिस्ट्रेट को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए बाध्य है, हालांकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 169 एक रिपोर्ट बनाने पर विचार नहीं करती है, यह प्रतिभूतियों के साथ या उनके बिना बांड प्राप्त करने पर विचार करती है।

अभियुक्त से पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होने के लिए यदि और जब आवश्यक हो और ऐसी रिपोर्ट पर धारा 173 के तहत विचार किया जाता है।

सीआरपीसी।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988-एस के दूसरे परंतुक का गैर-अनुपालन। 17 – पुलिस अधीक्षक के पद के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी या किसी उच्च पद के अधिकारी की आवश्यकता होती है।

अपराध के लिए, यदि कोई हो, जांच से पहले आदेश पारित करना। 13 (1) (ई) शुरू किया जाता है-अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से यह तर्क दिया जाता है कि आरोप पत्र में पुलिस अधीक्षक के पद से नीचे के पुलिस अधिकारी का ऐसा कोई आदेश नहीं हैः तत्काल मामले में, यह मुद्दा उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था-अन्यथा भी, यह तथ्य का सवाल है और रिकॉर्ड का मामला है-यदि यह अभियुक्त का मामला है कि रिकॉर्ड पर ऐसा कोई आदेश नहीं है, तो मुकदमे के दौरान निचली अदालत को भी यही बताया जा सकता है-रिकॉर्ड को सत्यापित करना, इसे देखना और कानून के अनुसार इस मुद्दे पर उचित निर्णय लेना निचली अदालत का काम है।

मैक्सिम-नल्लम टेम्पस ऑट लोकस ओपेरिट रेजि-पर चर्चा की गई। अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

पकड़नाः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 169

1. सी. आर. पी. सी. की धारा 169 मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट देने में चुप है, हालांकि जांच अधिकारी के अधीन है

धारा के तहत मजिस्ट्रेट को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने का दायित्व

173 सीआरपीसी से। इस प्रकार, यद्यपि सी. आर. पी. सी. की धारा 169 एक रिपोर्ट बनाने पर विचार नहीं करती है, यह अभियुक्त से प्रतिभूति के साथ या उसके बिना एक बांड प्राप्त करने पर विचार करती है ताकि यदि और जब ऐसा करने की आवश्यकता हो तो मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित हो सके जो संज्ञान लेने के लिए सशक्त है [2023] 7 एस. सी. आर.

पुलिस रिपोर्ट पर अपराध और ऐसी रिपोर्ट पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत विचार किया जाता है। [पैरा 39] [153-ए-बी]

"आगे की जाँच" शब्द का क्या अर्थ है?

2. (2009) 6 एस. सी. सी. 346 में रिपोर्ट किए गए रामा चौधरी बनाम बिहार राज्य के मामले में, इस न्यायालय ने कहा कि, "मामले में आगे की जांच के लिए। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के प्रावधान का अर्थ अतिरिक्त या पूरक है। आगे की जाँच ", इसलिए, है

पहले की जाँच को जारी रखना और पहले की जाँच को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए एक नई जाँच या पुनः जाँच शुरू नहीं की जानी चाहिए। [पैरा 48] [156-बी-सी]

जब "अंतिम रिपोर्ट" दायर की जाती है तो मजिस्ट्रेट के सामने क्या विकल्प होते हैं?

3. जहाँ भी जांच अधिकारी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) (i) के तहत मजिस्ट्रेट को भेजी गई अंतिम रिपोर्ट उसके सामने रखी जाती है, वहाँ कई परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। रिपोर्ट यह निष्कर्ष निकाल सकती है कि कोई अपराध किसी विशेष व्यक्ति और व्यक्तियों द्वारा किया गया प्रतीत होता है, और ऐसे मामले में मजिस्ट्रेट या तोः (1) रिपोर्ट स्वीकार करें और अपराध का संज्ञान लें

और प्रक्रिया जारी करने के लिए, (2) रिपोर्ट से असहमत हो सकते हैं और कार्यवाही को छोड़ सकते हैं या जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट/सामग्री के आधार पर संज्ञान ले सकते हैं, (3) धारा 156 (3) के तहत आगे की जांच का निर्देश दे सकते हैं और पुलिस से अनुरोध कर सकते हैं कि वह सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) के अनुसार रिपोर्ट। (4) विरोध शिकायत को एक शिकायत के रूप में मान सकते हैं, और धारा 200 के तहत आगे बढ़ सकते हैं और

202 सीआरपीसी से। [पैरा 49] [156-सी-एफ]

"आगे" के लिए मुख्य विचार क्या है?

जाँच "?

4. जैसा कि हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम में देखा गया है। गुजरात राज्य और अन्य ने (2004) 5 एस. सी. सी. 347 में रिपोर्ट किया, जो शीर्ष है।

आगे की जाँच के लिए विचार सत्य तक पहुँचना और वास्तविक और पर्याप्त न्याय करना है। आगे की जाँच के लिए जाँच एजेंसी के हाथों को इस पर नहीं बांधा जाना चाहिए

केवल देरी का आधार। दूसरे शब्दों में, केवल यह तथ्य कि मुकदमे को समाप्त करने में और देरी हो सकती है, आगे की जांच के रास्ते में खड़ा नहीं होना चाहिए यदि इससे अदालत को सच्चाई तक पहुंचने और वास्तविक और पर्याप्त और प्रभावी न्याय करने में मदद मिलेगी।

[पैरा 50] [156-जी-एच; 157-ए] स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v. हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी।

5. उन मामलों में उच्चतम न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का अवलोकन जहां अंतिम रिपोर्ट (समापन रिपोर्ट) दी जाती है।

पहले से प्रस्तुत और स्वीकार किए जाने से कानून की स्थिति बहुत स्पष्ट हो जाती है कि मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतिम रिपोर्ट रखे जाने और स्वीकार किए जाने के बाद भी, जांच एजेंसी को मामले में आगे की जांच करने की अनुमति है। अन्य में

शब्दों में, आगे की जांच करने के खिलाफ कोई रोक नहीं है

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के तहत प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट के बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत स्वीकार कर लिया गया है। यह भी स्पष्ट है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने से पहले, मजिस्ट्रेट के लिए अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने वाले आदेश की समीक्षा करना या उसे वापस लेना आवश्यक नहीं है। [पैरा

76] [171 - बी-सी]

6. अंतिम निष्कर्ष को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता हैः (i) मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतिम रिपोर्ट रखे जाने और स्वीकार किए जाने के बाद भी, यह है - जाँच एजेंसी के लिए मामले में आगे की जाँच करने की अनुमति। दूसरे शब्दों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के तहत प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार किए जाने के बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने के खिलाफ कोई रोक नहीं है; (ii) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने से पहले यह आवश्यक नहीं है कि अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने वाले आदेश की समीक्षा की जाए, वापस लिया जाए या रद्द किया जाए; (iv) आगे की जांच केवल पहले की जांच की निरंतरता है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्तों की दो बार जांच की जा रही है। इसके अलावा,

जाँच को अभियोजन के बराबर नहीं रखा जा सकता है और

दण्ड ताकि संविधान के अनुच्छेद 20 के खंड (2) के दायरे में आए। इसलिए, दोहरी खतरे का सिद्धांत आगे की जांच पर लागू नहीं होगा; (v) दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह सुझाव दे कि अदालत आगे के लिए एक आवेदन पर विचार करते समय आरोपी को सुनने के लिए बाध्य है।

सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) के तहत जांच। [पैरा 77] [171 डी-जी]

आगे की जाँच के कारण मुकदमे में देरी

7. आपराधिक न्याय का सामान्य नियम यह है कि "एक अपराध कभी नहीं मरता"। यह सिद्धांत प्रसिद्ध अधिकतम शून्य में परिलक्षित होता है। टेम्पस ऑट लोकस ओपेरिट रेजि (समय के अंतराल पर अपराधियों के खिलाफ कार्यवाही करने में क्राउन के लिए कोई बाधा नहीं है)। यह तय किया गया कानून है कि अपराधी [2023] 7 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अपराध को राज्य और समाज के खिलाफ गलत माना जाता है, भले ही यह किसी व्यक्ति के खिलाफ किया गया हो। आम तौर पर, गंभीर अपराधों में, राज्य द्वारा अभियोजन शुरू किया जाता है और न्यायालय के पास केवल देरी के आधार पर अभियोजन को खारिज करने की कोई शक्ति नहीं होती है। न्यायालय तक पहुँचने में केवल विलंब

स्वयं मामले को खारिज करने के लिए कोई आधार नहीं होगा। हालाँकि यह अंतिम निर्णय तक पहुँचने के लिए एक प्रासंगिक परिस्थिति हो सकती है। [पैरा 84] [181-जी-एच]

धारा 17 के दूसरे प्रावधान का गैर-अनुपालन

1988 अधिनियम

8. 1988 के अधिनियम की धारा 17 के दूसरे परंतुक में निर्देश दिया गया है कि 1988 के अधिनियम की धारा 13 की उप धारा (1) के खंड (ई) के तहत निर्दिष्ट अपराध की जांच बिना - पुलिस अधीक्षक के पद से कम के पुलिस अधिकारी का आदेश। इस प्रकार, दूसरे परंतुक से, यह स्पष्ट है कि उपखंड (ङ) में निर्दिष्ट अपराध की जाँच

1988 के अधिनियम की धारा 13 की धारा (1) भले ही खंड (ए) से (सी) में गिने गए किसी भी पुलिस अधिकारी या पहले परंतुक के अनुसार राज्य सरकार द्वारा उस ओर से अधिकृत किसी भी पुलिस अधिकारी द्वारा, केवल पुलिस अधिकारी के आदेश द्वारा किया जा सकता है जो पुलिस अधीक्षक के पद से कम न हो। इस प्रकार, दूसरा परंतुक 1988 के अधिनियम की धारा 13 (1) (ई) के तहत दंडनीय अपराध के आरोपी लोक सेवक के लिए पुलिस अधीक्षक के पद से नीचे के वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की जानकारी और सहमति के बिना एक पुलिस अधिकारी द्वारा जांच के खिलाफ अतिरिक्त सुरक्षा कवच की प्रकृति में है। पुलिस अधीक्षक रैंक के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी या रैंक में किसी भी उच्च अधिकारी को जांच, यदि कोई हो, से पहले एक आदेश पारित करने की आवश्यकता होती है।

इस तरह का अपराध शुरू किया जाता है। यह इंगित करने की आवश्यकता नहीं है कि, इस तरह की जांच का निर्देश देने से पहले, पुलिस अधीक्षक या

उनसे वरिष्ठ अधिकारी को सूचना पर अपना दिमाग लगाने और इस राय पर आने की आवश्यकता है कि इस तरह के आरोपों की जांच आवश्यक है। की ओर से तर्क का प्रचार किया गया

अभियुक्त व्यक्ति यह है कि आरोप-पत्र में पुलिस अधीक्षक के पद से कम के पुलिस अधिकारी का ऐसा कोई आदेश नहीं है। यह मुद्दा उच्च न्यायालय के समक्ष भी नहीं उठाया गया था। अन्यथा भी, यह तथ्य का सवाल है और रिकॉर्ड का मामला है।

यदि यह अभियुक्त का मामला है कि इस तरह का कोई आदेश नहीं है, तो केंद्रीय सर्वेक्षण के माध्यम से हेमेंद्र रेड्डी और एक और आदेश का पालन करें। ईटीसी।इसी तरह, मुकदमे के मामले में निचली अदालत को भी यही बताया जा सकता है। यह निचली अदालत का काम है कि वह इसे सत्यापित करे और इस मुद्दे पर सहमति से उचित निर्णय ले।

कानून। [पैरा 88] [183-एफ-एच; 184-ए-डी]

रामा चौधरी बनाम बिहार राज्य (2009) 6 एस. सी. सी. 346: [2009] 5 एससीआर 482; हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम। गुजरात राज्य और अन्य (2004) 5 एस. सी. सी. 347: [2004] 3 एस. सी. आर. 762; रामचंद्रन बनाम। आर. उदयकुमार और

अन्य (2008) 5 एस. सी. सी. 413: [2008] 8 एस. सी. आर. 439; के. चंद्रशेखर बनाम केरल राज्य और अन्य (1998) 5 एस. सी. सी. 223 [1998] 3 एस. सी. आर. 72; श्री भगवान समरधा श्रीपद वल्लभ वेंकट विश्वनाथ महाराज बनाम। ए. पी. और अन्य राज्य (1999) 5 एस. सी. सी. 740: [1999] 3 एससीआर 870; हेमंत धस्माना बनाम। केंद्रीय ब्यूरो

जाँच और एक और (2001) 7 एस. सी. सी. 536: [2001] 1 पूरक। एससीआर 646; संघ लोक सेवा आयोग बनाम। एस. पापैया और अन्य (1997) 7 एस. सी. सी. 614: [1997] 4 पूरक। एस. सी. आर. 56; राम लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली)

प्रशासन) (1979) 2 एससीसी 322: [1979] 2 एस. सी. आर. 923; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम ए. एस. पीटर (2008) 2 एस. सी. सी. 383 [2007] 13 एस. सी. आर. 517; निर्मल सिंह काहलों बनाम। पंजाब और अन्य राज्य (2009) 1 एस. सी. सी. 441: [2008] 14 एस. सी. आर. 1049; कारी चौधरी बनाम। एमएस. सीता देवी और

अन्य (2002) 1 एस. सी. सी. 714: [2001] 5 पूरक। एस. सी. आर. 588; आधिकारिक परिसमापक बनाम। दयानंद और अन्य (2008) 10

एससीसी 1: [2008] 15 एस. सी. आर. 331; पूजा पाल बनाम भारत संघ और अन्य (2016) 3 एस. सी. सी. 135: [2016] 11 एससीआर

560 – पर भरोसा किया।

विनय त्यागी बनाम। इरशाद अली उर्फ दीपक और अन्य

(2013) 5 एससीसी 762: [2012] 13 एस. सी. आर. 1005; विनुभाई हरिभाई मालवीय बनाम। गुजरात राज्य (2019) 17 एससीसी 1: [2019] 15 एस. सी. आर. 936; लुकोस ज़करिया उर्फ ज़क नेदुमचिरा ल्यूक और अन्य बनाम। जोसेफ और

अन्य (2022) एससीसी ऑनलाइन एससी 241; एच. एन. रिशबुद बनाम दिल्ली राज्य ए. आई. आर 1955 एस. सी 196: [1955] एस. सी. आर. 1150; कमलापति त्रिवेदी बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य 1980 (2) एस. सी. सी. 91 [1979] 2 एस. सी. आर. 717; राजस्थान राज्य बनाम अरुणा देवी और अन्य (1995) 1 एससीसी 1: [1994] 5 पूरक।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

274 ; एन. पी. झरिया बनाम एम. पी. राज्य (2007) 7 एस. सी. सी. 358:
[2007] 8 एस. सी. आर. 618; जापानी साहू बनाम। चंद्र शेखर
मोहंती (2007) 7 एससीसी 394 [2007] 8 एससीआर 582;
पुलिस आयुक्त, दिल्ली और एक अन्य v. पंजीयक,
दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली (1996) 6 एससीसी 323: [1996]
7 पूरक। एस. सी. आर. 432-संदर्भित।
दिवाकर सिंह बनाम। ए. राममूर्ति नायडू एयर 1919 मैड
751 ; राज्य वी। मेहर सिंह और ओआरएस। 1974 सी. आर. एल. एल. जे 970 -
संदर्भित किया गया।
राजा-सम्राट बनाम। ख्वाजा नजीर अहमद, वॉल्यूम। एलएक्सएक्सआई
भारतीय अपील, 203-संदर्भित।

मामला कानून संदर्भ

पैरा 17
(ii),
[2012] 13 एससीआर 1005
संदर्भित किया गया है
[2019] 15 एससीआर 936
पैरा 33
(ii)
संदर्भित किया गया है
[1955] एससीआर 1150
संदर्भित किया गया है
पैरा 43

[2009] 5 एससीआर 482

उस पर भरोसा करें

पैरा 48

[2004] 3 एससीआर 762

उस पर भरोसा करें

पैरा 50

[2008] 8 एससीआर 439

उस पर भरोसा करें

पैरा 51

उस पर भरोसा करें

[1998] 3 एससीआर 72

पैरा 51

[1999] 3 एससीआर 870

उस पर भरोसा करें

पैरा 53

उस पर भरोसा करें

[2001] 1 पूरक। एससीआर 646

पैरा 54

[1997] 4 पूरक। एससीआर 56

उस पर भरोसा करें

पैरा 55

[1979] 2 एस. सी. आर 923

उस पर भरोसा करें

पैरा 57

[2007] 13 एससीआर 517

उस पर भरोसा करें

पैरा 58

[2008] 14 एससीआर 1049

उस पर भरोसा करें

पैरा 59

[1979] 2 एससीआर 717

संदर्भित किया गया है

पैरा 66

[1994] 5 पूरक। एस. सी. आर. 274 को संदर्भित किया गया

पैरा 68

[2007] 8 एससीआर 618

संदर्भित किया गया है

पैरा 74

[2001] 5 पूरक। एससीआर 588 पर भरोसा किया गया

पैरा 75

[2008] 15 एससीआर 331

उस पर भरोसा करें

पैरा 82 स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v. हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी।

[2007] 8 एससीआर 582

संदर्भित किया गया है

पैरा 84

[1996] 7 पूरक। एस. सी. आर. 432 को संदर्भित किया गया

पैरा 86

[2016] 11 एससीआर 560

उस पर भरोसा करें

पैरा 87

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील

नं. 1300-1302 2023 तक।

सी. आर. एल. ओ. पी. में 15.12.2015 दिनांकित निर्णय और आदेश से

नं. 11101 और 2015 का 15873 और मद्रास में उच्च न्यायालय के 2016 के सी. आर. एल. ओ. पी. No.411 में दिनांकित 08.01.2016।

जयंत के. सूद, ए. एस. जी., प्रवीण गौतम, श्रीमती सुहासिनी सेन, श्रीमती.

सौदामिनी शर्मा, अमित शर्मा बी, संतोष कुमार, पी. वी. योगेश्वरन, अरविंद कुमार शर्मा, अधिवक्ता। अपीलार्थी के लिए।

सुरेश बाबू, सी. के. सासी, अब्दुल्ला नसीह वी. टी., सुश्री मीना के.

पौलोस, नवीन सुरेश, अधिवक्ता। उत्तरदाताओं के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

जे. बी. पारदीवाला, जे.

1. छुट्टी दे दी गई।

2. चूँकि सभी शीर्षक अपीलों में उठाए गए मुद्दे हैं

जिन्हें समान रूप से सुनवाई के लिए लिया गया था और इस सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा उनका निपटारा किया जा रहा है।

3. कानून का प्रमुख प्रश्न जो विचार के लिए आता है

वर्तमान मुकदमे में यह न्यायालय यह है कि क्या उच्च न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ कथित अपराधों के लिए सी. बी. आई. द्वारा शुरू किए गए पूरे अभियोजन को इस आधार पर रद्द कर दिया था कि सी. बी. आई. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में, 'सी. आर. पी. सी.') की धारा 173 की उप धारा (8) के तहत आगे की जांच नहीं कर सकती थी और एक बार पहले ही सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (समापन रिपोर्ट) की उप धारा (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद आरोप पत्र दायर किया था? दूसरे शब्दों में, क्या उच्च न्यायालय का यह विचार सही था कि विशेष न्यायालय इस पर संज्ञान नहीं ले सकता था

आगे की जाँच के आधार पर सी. बी. आई. द्वारा दायर आरोप-पत्र, जो पहले ही एक बार समापन रिपोर्ट दायर कर चुका है और उसे संबंधित अदालत द्वारा प्रासंगिक समय पर स्वीकार कर लिया गया है?

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

फैक्ट मैट्रिक्स 4.
प्रतिवादी संख्या 3 यहाँ डी. द्वारकानाधा रेड्डी

(अभियुक्त नं. 1) वर्ष 1993 में एक निवारक अधिकारी के रूप में सीमा शुल्क विभाग की सेवाओं में शामिल हुआ।

5. जनवरी, 2003 में, प्रत्यर्थी संख्या 3 को पदोन्नत किया गया था

सीमा शुल्क विभाग में मूल्यांकनकर्ता।

6. 30.06.2006 पर, पुलिस अधीक्षक का कार्यालय (सीबीआई)

निम्नलिखित जानकारी प्राप्त की गई थीः

डी. द्वारकानाधा रेड्डी (ए-1) इस पद पर थे।

((i)

2004 से सीमा शुल्क विभाग में मूल्यांकनकर्ता और उनकी मुख्य आय उनका वेतन था।

उनकी पत्नी डी. सुजाना रेड्डी (ए-2) के पास कोई कृषि भूमि नहीं है।

((ख)

उसका नाम है और मैसर्स सुजाना इंजीनियर्स के नाम पर व्यवसाय करता है।

कि दंपति ने रुपये की संपत्ति अर्जित की थी। 64 , 41 , 690.92

(iii)

01.04.2001 और 31.03.2005 के बीच, हालाँकि उक्त अवधि के दौरान उनकी संयुक्त आय रु। 50 , 95 , 371.57 / - , जिसमें ए-1 की वेतन आय, कृषि शामिल है।

ए-2 की आय, ए-2 की व्यावसायिक आय, बैंक ब्याज, आंध्र बैंक से आवास ऋण, संपत्ति की बिक्री पर पूंजीगत लाभ, ए-1 आदि को दिए गए पुरस्कार।

(iv) 01.04.2001 और 31.03.2005 के बीच की अवधि के दौरान, वे

रुपये का व्यय किया गया। 12 , 74 , 347.16 / - , उन्हें रुपये की बचत के साथ छोड़ दें। 38 , 21 , 024.41 / - .

इसलिए उनकी कुल आय से अधिक संपत्ति का मूल्य था।

(v)

रु. 26 , 20 , 666.51 / - 31.03.2005 पर।

ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, आर. सी. एम. ए. 1 में एक एफ. आई. आर.

2006 सी. बी. आई. द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में, 'आई. पी. सी.') की धारा 109 के साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में, '1988 अधिनियम') की धारा 13 (1) (ई) के साथ पठित धारा 13 (2) के तहत 0027 दर्ज किया गया था।

7. 24.12.2008 पर, सी. बी. आई./ए. सी. बी. ने इसके समक्ष एक आवेदन दायर किया।

सी. बी. आई. मामलों के प्रधान विशेष न्यायाधीश, चेन्नई ने आरोपी नंबर 1 (प्रतिवादी नंबर 3) के खिलाफ नियमित विभागीय कार्रवाई के उद्देश्य से कार्यवाही बंद करने और दस्तावेजों को वापस करने का अनुरोध किया। आवेदन में अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार कहा गया हैः

स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v.

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

" जाँच पूरा होने के बाद यह पता चला है कि अभियुक्त पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। अतः अंतिम रिपोर्ट यू/एस।

173 Cr.PC दाखिल किया जा रहा है जिसे स्वीकार किया जा सकता है।

8. यह भी प्रार्थना की गई कि जांच के दौरान जब्त किए गए दस्तावेजों को वापस कर दिया जाए ताकि जांच में उनका उपयोग किया जा सके।

नियमित विभागीय कार्रवाई जो आरोपी नंबर 1 के खिलाफ शुरू की जा सकती है।

9. सी. बी. आई. द्वारा दायर उपरोक्त आवेदन पर विशेष अदालत ने विचार किया और निम्नलिखित आदेश दिनांक 29.01.2009 आया।

पारित कियाः

" आदेश

यह याचिका याचिकाकर्ता/शिकायतकर्ता यू/एस द्वारा दायर की गई है। 173 Cr.PC एफ. आई. आर. को बंद करने और जाँच के दौरान एकत्र किए गए दस्तावेजों को नियमित जांच में उपयोग करने के लिए रखने की प्रार्थना कर रहा है।

ए 1 के खिलाफ विभागीय कार्रवाई।

1. विद्वान लोक अभियोजक को सुना। एफ. आई. आर., रिपोर्ट और संबंधित अभिलेखों का अवलोकन किया। रिपोर्ट में बताया गया कारण विश्वसनीय है। इसलिए अंतिम रिपोर्ट स्वीकार कर ली जाती है और एफ. आई. आर. को बंद कर दिया जाता है और जांच के दौरान एकत्र किए गए दस्तावेजों को नियमित विभागीय कार्रवाई में उपयोग करने की अनुमति दी जाती है।

अल के खिलाफ।

ओपन कोर्ट में मेरे द्वारा उच्चारण किया गया, यह 29 वां दिन है

जनवरी 2009।

प्राचार्य एस. पी. सीबीआई मामलों के लिए न्यायाधीश "

10. 24.02.2012 पर, आरोपी नंबर 1 के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू की गई थी।

11. अभिलेख पर सामग्री से यह प्रतीत होता है कि अंत में

विभागीय कार्यवाही, आय से अधिक परिसंपत्तियों का कब्जा स्थापित नहीं किया जा सका। हालांकि, आरोपी नंबर 1 को एक प्रशासनिक चेतावनी जारी की गई थी कि उसने अपने विभाग को रुपये का ऋण प्राप्त करने के तथ्य को सूचित करने में चूक की। 3 , 00 , 000 / - (तीन लाख रुपये) अपनी पत्नी के साथ संयुक्त रूप से

आंध्र बैंक से। एक प्रशासनिक सही खर्च की सूचना नहीं देने के संबंध में भी चेतावनी जारी की गई थी।

अभियुक्त नं. 1 द्वारा घर के निर्माण के लिए किया गया खर्च।

23] 7 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

12. 26.06.2013 पर, सी. बी. आई. ने सी. आर. एल. दायर किया। आर. सी. एम. ए. 1 2006 ए. आई. टी. 27 में एम. पी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) के तहत फिर से खोलने की मांग करते हुए और अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित बताते हुए मामले की आगे की जांच करनाः

" ..... अभियोजन पक्ष ने धारा 173 Cr.P.C के तहत इस माननीय न्यायालय के समक्ष 24.12.2008 पर एक प्रार्थना के साथ अंतिम रिपोर्ट दायर की थी।

तथ्य की गलती के रूप में एफ. आई. आर. को बंद करने के लिए "।

" ..... यह विनम्रतापूर्वक प्रस्तुत किया जाता है कि अब उपरोक्त अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ लगाए गए आरोप को साबित करने और ए-1 और ए-2 की आय के ज्ञात स्रोतों के अनुपात से अधिक के कब्जे के आरोप को साबित करने के लिए नए सबूत सामने आए हैं। इसलिए इसे फिर से खोलना और आगे बढ़ाना उचित और आवश्यक है।

उपरोक्त मामले की यू/एस जांच करें। 173 (8) Cr.P.C. न्याय के हित में "।

13. विशेष न्यायालय ने उपरोक्त आवेदन को दिनांक 28.06.2013 के आदेश के माध्यम से अनुमति दी, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

" सुना है। अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियोजन पक्ष के पास आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्ति रखने के आरोप को साबित करने के लिए नए सबूत हैं। अतः यह न्यायसंगत है और मामले को फिर से खोलने का आदेश देना उचित है।

14. 01.03.2014 पर, सी. बी. आई. ने एक पत्र/समन नं. आर. सी. 27/ए/2006/सी. बी. आई./ए. सी. बी./चेन्नई/0799 के उपायुक्त को

सीमा शुल्क, सी. आई. वी.-सतर्कता सीमा शुल्क गृह, चेन्नई, आर. सी. 27 (ए)/06 में जांच के संबंध में प्रतिवादी संख्या 3 डी. द्वारकानाधा रेड्डी की उपस्थिति की आवश्यकता है।

15. 13.03.2014 पर, प्रतिवादी संख्या 3 ने सी. आर. एल. दाखिल किया। मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष 2014 के सं. 6371 का ओ. पी.

दिनांकित 1.03.2014 समन से संबंधित कार्यवाही। प्रतिवादी संख्या 3 ने कहा कि वह समन में शामिल हुआ था और पूछताछ के दौरान उसे ऐसे दस्तावेज पेश करने के लिए कहा गया था जो या तो अस्तित्व में नहीं थे या याचिकाकर्ता के पास उपलब्ध नहीं थे या पहले से ही उपलब्ध नहीं थे।

सी. बी. आई. के पास उपलब्ध "। 16. 21.03.2014 पर, सी. बी. आई. ने प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा दायर उपरोक्त निर्दिष्ट याचिका पर अपना जवाबी हलफनामा दायर किया, जिसमें विशेष रूप से कहा गया था किः

" 3. यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्ष 2013 में सी. बी. आई. को कुछ जानकारी/सामग्री प्राप्त हुई थी जो सी. ए. टी. ए. थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v. को फिर से खोलने के लिए आवश्यक थी।

मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

इस बंद मामले की जांच। तदनुसार श्री जी. पलानीअप्पन, पुलिस निरीक्षक, सी. बी. आई./ए. सी. बी., चेन्नई ने एक याचिका दायर की।

के लिए प्रधान विशेष न्यायाधीश के माननीय न्यायालय में याचिका

सी. बी. आई. मामले, चेन्नई के लिए उक्त अदालत के आदेश की मांग जाँच का पुनः उद्घाटन और पीएसजे का माननीय न्यायालय,

चेन्नई ने आदेश जारी किया था। 28.06.2.013 पुनः आदेश दें इस मामले की जांच शुरू करना।

17. उच्च न्यायालय ने अपने दिनांकित 11.09.2014 के आदेश को खारिज कर दिया

) . पी. 2014 का सं. 6371, अन्य बातों के साथ-साथ निम्नानुसार धारण करता हैः

((i)

अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ जांच को फिर से शुरू करने के लिए ताजा सामग्री। सी. आर. पी. सी. के 173 (8) के तहत, एक पुलिस अधिकारी आगे बढ़ सकता है।

((ख)

धारा के तहत एक रिपोर्ट के बाद भी आगे की जांच

173 (2) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) को ध्यान में रखते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा प्रस्तुत की जाती है और विनय त्यागी बनाम में अभिनिर्धारित की जाती है। इरशाद अली उर्फ

दीपक और अन्य ने (2013) 5 एस. सी. सी. 762 में रिपोर्ट किया,

एकमात्र सवार यह है कि पुलिस को औपचारिक रूप से जांच करनी चाहिए

न्यायालय से अनुमति।

((iii) मजिस्ट्रेट द्वारा अंतिम रिपोर्ट की स्वीकृति नहीं होती है।

यदि आगे की जांच में नई सामग्री सामने आती है तो उसे संज्ञान लेने से रोकें।

((iv) सी. बी. आई. काउंटर में यह कहा गया है कि ताजा सामग्री

वर्ष 2013 में प्राप्त हुआ जिसे फिर से खोलने की आवश्यकता थी

जाँच। मजिस्ट्रेट की आगे की जाँच का आदेश देने की शक्ति

(v)

सी. आर. पी. सी. की धारा 156 (3) धारा 173 (8) के आलोक में आगे की जांच करने की पुलिस की शक्ति के साथ टकराव नहीं करती है।

सी. आर. पी. सी., और इसलिए मजिस्ट्रेट आदेश दे सकते हैं

जाँच को फिर से शुरू करना।

(vi) यह निश्चित रूप से तभी किया जा सकता है जब ताजा सामग्री आए।

जाँच अधिकारी की जानकारी में जो उसने किया

जैसा कि वर्तमान मामले में पहले नहीं है।

(vii) चूंकि सी. बी. आई. ने इससे जुड़ी नई सामग्री एकत्र की है

मामला जो पहले उपलब्ध नहीं था, यह नहीं कहा जा सकता है कि विशेष न्यायालय ने जांच को फिर से शुरू करने में अपने अधिकार क्षेत्र से परे काम किया है।

18. 17.12.2014 पर, सी. बी. आई. ने इसके खिलाफ अपना विस्तृत आरोप पत्र दायर किया। शानदार संख्या। 1 , 2 और 3 क्रमशः अन्य बातों के साथ निम्नलिखित आरोप लगाते हैंः

((i)

कि प्रत्यर्थी संख्या 1, हेमेंद्र रेड्डी, भाई

डी. सुजाना (ए-2) की साली चेन्ना रेड्डी गारू पल्ली, चित्थूर जिले में एक किसान थी।

((ख)

प्रत्यर्थी संख्या 3, के कब्जे में पाया गया

उनके नाम और उनके परिवार के सदस्यों डी. सुजाना और हेमेंद्र रेड्डी के नाम पर संपत्ति/आर्थिक संसाधन। 61 , 11 , 989 / - उनकी आय के ज्ञात स्रोतों की तुलना में रु। 59 , 90 , 135 / - बीच की अवधि में

01.01.1998 और 30.06.2005।

19. 2.06.2015 पर, प्रतिवादी संख्या 2 ने यहाँ सी. आर. एल. दाखिल किया। मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष 2015 का ओ. पी. सं. 3, गेशीट।

20. 27.04.2015 पर, प्रतिवादी संख्या 1 ने यहाँ सी. आर. एल. दाखिल किया। ओपी. 1101 2015 में, आरोप पत्र को रद्द करने की मांग की गई।

21. 14.09.2015 पर सी. बी. आई. ने उपरोक्त सभी के खिलाफ अपना प्रतिवाद दायर किया। ओएनएस।

22. 15.12.2015 पर, उच्च न्यायालय ने सी. आर. एल. को अनुमति दी। ओ. पी. नं. 1 2015 और सीआरएल। 2015 का ओ. पी. सं. 15873 क्रमशः

अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित रूप में धारण करनाः

कि धारा 173 के तहत अंतिम रिपोर्ट प्राप्त होने पर

(1)

सी. आर. पी. सी., मजिस्ट्रेट के पास तीन विकल्प हैं-या तो रिपोर्ट को स्वीकार करना और मामले को बंद करना, रिपोर्ट से असहमत होना और मामले को आगे बढ़ाना या सी. आर. पी. सी. की धारा 156 (3) के तहत आगे की जांच का आदेश देना।

कि मजिस्ट्रेट को केवल "आगे" निर्देश देने का अधिकार है

((ख)

जाँच "और" पुनः जाँच/नए सिरे से जाँच "का निर्देश नहीं देना।

विनय त्यागी (ऊपर) में निर्णय के संदर्भ में नहीं

(iii)

जांच एजेंसी को धारा 173 (2) के तहत एक बार रिपोर्ट देने के बाद नए सिरे से या फिर से जांच करने का अधिकार है।
सी. आर. पी. सी. दाखिल की जाती है।

((iv) "पुनः खोलने"/"आगे की जांच" की मांग करने वाली याचिका।

4 साल के अंतराल के बाद दायर किया गया था।

स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन V. हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

मजिस्ट्रेट को आगे की अनुमति देने के लिए सशक्त बनाने के लिए

(v)

जाँच, मजिस्ट्रेट के सामने कुछ लंबित होना चाहिए था, लेकिन कोई मामला लंबित नहीं था क्योंकि

जाँच पहले ही बंद हो चुकी थी।

(vi)

इस प्रकार विशेष न्यायालय के पास अनुमति देने की कोई शक्ति नहीं थी

आगे की जांच करने के लिए।

(vii)

विनय त्यागी (उपरोक्त) का फैसला नहीं लाया गया था।

निर्णय लेते समय उच्च न्यायालय का ध्यान आकर्षित करना

सीआरएल। 2014 का ओ. पी. सं. 6371।

23. ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 3 ने भी यहां सी. आर. एल. दायर किया था। ओपी.

2016 का सं. 411, आरोप पत्र को रद्द करने की मांग करता है। उच्च न्यायालय ने दिनांक 08.01.2016 के आदेश के माध्यम से सी. आर. एल. को अनुमति दी। डी. द्वारकानाधा रेड्डी द्वारा 2016 के ओ. पी. सं. 411 को उसके द्वारा पारित दिनांक 15.12.2015 के आदेश के संदर्भ में दायर किया गया था, जिसमें कहा गया था कि वही सिद्धांत और तर्क डी. द्वारकानाधा रेड्डी द्वारा दायर याचिका पर भी लागू होंगे।

24. इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने अंततः पूरे अभियोजन को अनिवार्य रूप से इस आधार पर रद्द कर दिया कि विशेष न्यायालय (सी. बी. आई.) के पास सी. बी. आई. को आगे की जांच करने की अनुमति देने का कोई अधिकार क्षेत्र/शक्ति नहीं थी। दूसरे शब्दों में, उच्च न्यायालय का विचार था कि अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ दायर आरोप पत्र एकत्र की गई सामग्री का परिणाम था

आगे की जाँच के दौरान, जो अपने आप में अवैध थी और इसलिए, आपराधिक कार्यवाही कानून की नज़र में बनाए रखने योग्य नहीं होगी। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय इस तथ्य से भी अवगत था कि एक समन्वय पीठ ने पहले सी. आर. एल. में पारित 11.09.2014 के आदेश के माध्यम से सभी मुद्दों को समाप्त कर दिया था। 2014 का ओ. पी. सं. 6371।

हालाँकि, इस पर इस आधार पर विचार नहीं किया गया कि समन्वय पीठ द्वारा पारित उक्त आदेश आकस्मिक था और इसलिए, किसी अन्य समन्वय पीठ के लिए बाध्यकारी नहीं था।

25. ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, सी. बी. आई. वर्तमान अपीलों के साथ इस न्यायालय के समक्ष है।

सी. बी. आई. के स्वयं के बारे में निवेदन

26. सी. बी. आई. की ओर से पेश हुए भारत के विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री जयंत के. सूद ने जोर देकर कहा कि उच्च न्यायालय ने

विवादित आदेशों को पारित करने में एक गंभीर त्रुटि की जिससे न्याय की गंभीर विफलता हुई।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

27. विद्वान वकील ने आगे कहा कि कानून अच्छी तरह से तय है कि संबंधित अदालत द्वारा समापन रिपोर्ट दायर करने और स्वीकार करने के बाद भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (8) के तहत आगे की जांच की जा सकती है। वह प्रस्तुत करेंगे कि नई सामग्री/सबूत सामने आए और सीबीआई के हाथों में आए, जिसके आधार पर विशेष अदालत के समक्ष एक उचित आवेदन दायर किया गया था, जिसमें आगे की जांच करने की अनुमति मांगी गई थी। उन्होंने आगे कहा कि सी. बी. आई. द्वारा दायर आवेदन पर विधिवत विचार किया गया और विशेष अदालत ने सी. बी. आई. को मामले को फिर से खोलने और आगे की जांच करने की अनुमति दी।

28. विद्वान वकील ने आगे कहा कि प्रतिवादी संख्या 3 (अभियुक्त संख्या 1) ने मामले को फिर से खोलने और सी. आर. एल. दाखिल करके उच्च न्यायालय के समक्ष आगे की जांच करने की मांग में सी. बी. आई. की ओर से की गई पूरी कार्रवाई पर सवाल उठाया था। 2014 के ओ. पी. सं. 6371 और उच्च न्यायालय ने एक विस्तृत आदेश द्वारा हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था। विद्वान वकील के अनुसार, सी. आर. एल. में उच्च न्यायालय की एक समन्वित पीठ द्वारा पारित आदेश। 2014 का ओ. पी. सं. 6371 एक अन्य समन्वित पीठ के लिए बाध्यकारी था और इसे इस आधार पर समाप्त या अनदेखा नहीं किया जा सकता था कि सी. आर. एल. का निर्णय लेते समय। 2014 का ओ. पी. सं. 6371, विनीत त्यागी (उपर्युक्त) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय की ओर उच्च न्यायालय का ध्यान नहीं खींचा गया था। श्री सूद ने आगे कहा कि ऐसा नहीं है कि सी. आर. एल. का निर्णय लेते समय विनीत त्यागी (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर मुकदमे के पहले दौर में विचार नहीं किया गया था। 2014 का ओ. पी. सं. 6371 जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा सीआरएल में दिनांक 11.09.2014 पारित आदेश के पैरा 5 से स्पष्ट है। 2014 का ओ. पी. सं. 6371।

29. ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, विद्वान वकील प्रार्थना करता है कि उसकी सभी अपीलों में योग्यता होने के कारण, उन्हें अनुमति दी जा सकती है और विवादित आदेश को अलग रखा जाए।

अभियुक्त के स्वयं पर प्रस्तुतियाँ

लोग

30. दूसरी ओर, अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से पेश विद्वान वकील ने सभी अपीलों का जोरदार विरोध किया है।

यह प्रस्तुत करते हुए कि उच्च न्यायालय द्वारा विवादित आदेश पारित करने में कोई त्रुटि, कानून की त्रुटि से बहुत कम नहीं कहा जा सकता है। विद्वान वकील प्रस्तुत करेंगे कि विशेष अदालत (सी. बी. आई.) द्वारा समापन रिपोर्ट की स्वीकृति अंततः कार्यवाही को समाप्त कर देगी और उसके बाद यह जांच एजेंसी के लिए एक कानूनी बाधा के रूप में काम करेगी।

कथित स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन के संबंध में कोई और जांच करना।

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

एक पूरक रिपोर्ट दाखिल करने में सक्षम बनाना। तत्काल मामले में, विद्वान वकील के अनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आदेश पारित करने के समय कुछ भी लंबित नहीं था। यह बताया गया कि एफ. आई. आर. को बंद कर दिया गया था और जाँच के दौरान एकत्र किए गए सभी सबूतों को विभागीय कार्यवाही के उद्देश्य से सी. बी. आई. को वापस करने का आदेश दिया गया था। ऐसी परिस्थितियों में, विद्वान वकील के अनुसार, आगे की जांच की कोई गुंजाइश नहीं थी और अगर आगे की जांच का आदेश दिया जाता है तो यह फिर से जांच या नए सिरे से जांच या नए सिरे से जांच के रूप में अच्छा है, जो अन्यथा कानून में अनुमत नहीं है।

31. विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि आगे की जांच नहीं की जा सकती है

किसी भी समय ऑर्डर करें। यह तर्क दिया गया कि मामले में आगे की जांच चार साल की अवधि के बाद की गई थी

समापन रिपोर्ट की तारीख से। यदि अनिश्चित काल के बाद आगे की जांच की अनुमति दी जाती है, तो इसके परिणामस्वरूप मुकदमे में देरी होगी जिससे संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होगा, यानी आरोपी के त्वरित सुनवाई के अधिकार का उल्लंघन होगा।

32. विद्वान वकील ने आगे कहा कि 1988 के अधिनियम की धारा 17 (दूसरा परंतुक) के तहत अनिवार्य आवश्यकता के गैर-अनुपालन से संबंधित वर्तमान मुकदमे में एक अतिरिक्त मुद्दा उत्पन्न होता है।

1988 के अधिनियम की धारा 17 (दूसरा परंतुक) का अनुपालन एक अवैधता है जो पूरे मुकदमे को दूषित करती है। 33. उपरोक्त प्रस्तुतियों के समर्थन में, निम्नलिखित मामले कानून पर निर्भरता रखी गई है:

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

विनय त्यागी बनाम। इरशाद अली उर्फ दीपक और अन्य

((i)

(2013) 5 एस. सी. सी. 762 में सूचित;

विनूभाई हरिभाई मालवीय बनाम। गुजरात राज्य ने बताया

((ख)

(2019) 17 एस. सी. सी. 1 में; और

लुकोस ज़चारिया उर्फ ज़ैक नेदुमचिरा ल्यूक और

(iii)

अन्य बनाम। जोसेफ जोसेफ और अन्य ने (2022) में रिपोर्ट किया

एससीसी ऑनलाइन एससी 241।

विश्लेषण

34. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 169 इस प्रकार हैः

" 169. साक्ष्य की कमी होने पर अभियुक्त को रिहा करना।

▬

यदि, इस अध्याय के तहत एक जांच पर, यह प्रतीत होता है

पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी जो पर्याप्त नहीं है साक्ष्य या संदेह का उचित आधार

अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के पास भेजने पर, ऐसा अधिकारी,

बंधपत्र, प्रतिभू के साथ या बिना, जैसा कि ऐसा अधिकारी निर्देश दे सकता है, आवश्यकता पड़ने पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश हों।

पुलिस पर अपराध का संज्ञान लेने का अधिकार

रिपोर्ट करना, और अभियुक्त पर मुकदमा चलाना या उसे मुकदमे के लिए प्रतिबद्ध करना।

35. उपरोक्त धारा के अवलोकन से पता चलता है कि

जाँच अधिकारी ऐसे व्यक्ति को रिहा करने के लिए बाध्य है, जो प्रतिभू के साथ या उसके बिना बांड निष्पादित करने पर हिरासत में है, यदि सबूत है

ऐसे व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के पास भेजने के लिए पर्याप्त और/या संदेह का कोई उचित आधार नहीं है।

36. इसलिए सी. आर. पी. सी. की धारा 169 का सादा पाठ,

यह अभिधारणा है कि जब जांच अधिकारी अपनी कार्रवाई की सूचना विद्वान मजिस्ट्रेट को देता है, तो यह एक रिपोर्ट नहीं होगी, हालांकि यह जांच अधिकारी या पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा उसकी कार्रवाई की रिपोर्ट होगी।

37. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 द्वारा उठाए जाने वाले कदमों के बारे में बताती है

जाँच पूरा होने के बाद जाँच अधिकारी। पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी से अपेक्षित है कि वह उक्त धारा के तहत रिपोर्ट को मजिस्ट्रेट को भेजे जो निर्धारित प्रपत्र में अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त है।

38. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 इस प्रकार हैः

सी. ए. टी. ई. एच. थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन V.मेंधरा रेड्डी और एक और, ई. टी. सी. [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

" 173.जाँच पूरा होने पर पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट।

▬▬▬

(1) इस अध्याय के तहत प्रत्येक जांच बिना किसी अनावश्यक देरी के पूरी की जाएगी। (1ए) धारा 376,376ए, 376एबी, 376बी, 376सी, 376डी, 376डीए, 376डीबी या 376ई के तहत अपराध के संबंध में उस तारीख से जांच जिस दिन पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा जानकारी दर्ज की गई थी।

(2) (i) जैसे ही यह पूरा हो जाता है, पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी एक मजिस्ट्रेट के पास जाएगा जो इसके लिए सशक्त होगा -

पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान लें, एक रिपोर्ट में

राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्रपत्र, जिसमें कहा गया है कि

(क) पक्षकारों के नाम;

((ख) सूचना की प्रकृति;

(ग) उन व्यक्तियों के नाम जो मामले की परिस्थितियों से परिचित प्रतीत होते हैं;

((घ) क्या ऐसा प्रतीत होता है कि कोई अपराध किया गया है और यदि है, तो किसके द्वारा किया गया है;

(ई) क्या आरोपी को गिरफ्तार कर लिया गया है; (च) क्या उसे उसके मुचलके पर रिहा किया गया है और, यदि हां, तो प्रतिभू के साथ या उसके बिना;

(छ) क्या उसे धारा के तहत हिरासत में भेज दिया गया है।

170 .

भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376,376ए, 376एबी, 376बी, 376सी, 376डी, 376डीए, 376डीबी या धारा 376ई के तहत। ((ii) अधिकारी राज्य सरकार द्वारा निर्धारित तरीके से की गई कार्रवाई के बारे में भी सूचित करेगा।

उसके द्वारा, उस व्यक्ति को, यदि कोई हो, जिसके द्वारा अपराध करने से संबंधित जानकारी पहली बार दी गई थी।

(3) जहां धारा 158 के तहत पुलिस के किसी वरिष्ठ अधिकारी की नियुक्ति की गई है, वहां रिपोर्ट, किसी भी मामले में जिसमें राज्य सरकार सामान्य या विशेष आदेश द्वारा ऐसा निर्देश देती है, उस अधिकारी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया, और वह आदेश [2023] 7 एस. सी. आर. को लंबित रख सकता है।

मजिस्ट्रेट, पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को आगे की जांच करने का निर्देश देते हैं।

(4) जब भी इस धारा के तहत भेजी गई रिपोर्ट से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त को उसके मुचलके पर रिहा कर दिया गया है, तो मजिस्ट्रेट ऐसे मुचलके के निर्वहन के लिए या अन्यथा ऐसा आदेश देगा जो वह उचित समझे।

(5) जब ऐसी रिपोर्ट किसी ऐसे मामले के संबंध में होती है जिस पर धारा 170 लागू होती है, तो पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट को भेजेगा। रिपोर्ट के साथ

(क) वे सभी दस्तावेज या प्रासंगिक उद्धरण जिन पर अभियोजन पक्ष ने जांच के दौरान मजिस्ट्रेट को पहले से भेजे गए दस्तावेजों के अलावा भरोसा करने का प्रस्ताव किया है;

(ख) सभी व्यक्तियों के धारा 161 के तहत दर्ज किए गए बयान।

जिनका अभियोजन पक्ष अपने गवाहों के रूप में परीक्षण करने का प्रस्ताव करता है।

(6) यदि पुलिस अधिकारी की राय है कि इस तरह के किसी भी बयान का कोई भी हिस्सा कार्यवाही के विषय-वस्तु के लिए प्रासंगिक नहीं है या आरोपी को इसका खुलासा नहीं है

न्याय के हित में आवश्यक है और इसमें अक्षम्य है

जनहित में, वह बयान के उस हिस्से को इंगित करेगा और मजिस्ट्रेट से उस हिस्से को अभियुक्त को दी जाने वाली प्रतियों से बाहर करने का अनुरोध करते हुए एक नोट संलग्न करेगा और ऐसा अनुरोध करने के लिए अपने कारण बताएगा।

(8) इस धारा की किसी भी बात को अपराध के संबंध में आगे की जांच में बाधा नहीं माना जाएगा। उप-धारा (2) मजिस्ट्रेट को भेज दी गई है और,

जहां ऐसी जांच के बाद, पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्राप्त करता है, वह मजिस्ट्रेट को आगे की रिपोर्ट या रिपोर्ट भेजेगा।

विहित प्रपत्र में ऐसे साक्ष्य के संबंध में और उप-धारा (2) से (6) के प्रावधान, जहां तक हो सके, ऐसी रिपोर्ट या रिपोर्ट के संबंध में लागू होंगे जो वे लागू होते हैं।

उप-धारा (2) के तहत भेजी गई रिपोर्ट के संबंध में।

(जोर दिया गया)

39. इस प्रकार, सी. आर. पी. सी. की धारा 169 रिपोर्ट देने में चुप है

मजिस्ट्रेट, हालांकि जांच अधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत मजिस्ट्रेट को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए बाध्य है। इस प्रकार, हालांकि सी. आर. पी. सी. की धारा 169 एक रिपोर्ट बनाने पर विचार नहीं करती है, यह प्रतिभूति के साथ या उसके बिना एक बांड प्राप्त करने पर विचार करती है। अभियुक्त पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होने के लिए यदि और जब आवश्यक हो और ऐसी रिपोर्ट पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत विचार किया जाता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) (i) के खंड (घ) और (च) निम्नानुसार हैं:

" 173 (2) ((i)

XXX

XXX

((घ) क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और, यदि हाँ, तो किसके द्वारा;

XXX

XXX

XXX

(च) क्या उसे उसके मुचलके पर रिहा किया गया है और, यदि हां,

चाहे प्रतिभू के साथ हो या बिना "।

40. सीआरपीसी की धारा 173 (8) आगे की जांच से संबंधित है।

और पूरक रिपोर्ट। दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (संक्षेप में, 'पुरानी संहिता') में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के समान कोई प्रावधान नहीं था। यही सी. आर. पी. सी. में एक नया जोड़ा गया प्रावधान है। विधि आयोग की 41 वीं रिपोर्ट में यह जोड़ा गया था कि आगे की जांच करने के पुलिस के अधिकार की वैधानिक रूप से पुष्टि की जानी चाहिए।

41. पुरानी संहिता में, निर्धारित करने का कोई प्रावधान नहीं था

पुलिस रिपोर्ट जमा करने और मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लेने के बाद, जब नए तथ्य सामने आते हैं, तो नए सिरे से जांच के लिए पुलिस द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया। पुलिस द्वारा आगे की जाँच को प्रतिबंधित करने वाला कोई स्पष्ट प्रावधान भी नहीं था।

42. उक्त चूक की पहली बार आपूर्ति करने की मांग की गई थी

1919 में ही मद्रास उच्च न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिवाकर सिंह बनाम. ए. राममूर्ति नायडू ने आकाशवाणी 1919 मैड में रिपोर्ट किया

751 , जहाँ यह देखा गया था किः

एक अन्य तर्क सामने रखा गया है कि जब एक रिपोर्ट

सी. आर. आई. की धारा 173 के तहत जांच भेजी गई है।

पीसी, पुलिस के पास जांच की कोई और शक्तियाँ नहीं हैं, लेकिन इस तर्क को संक्षेप में इस टिप्पणी से पूरा किया जा सकता है कि संख्या

किसी अपराध की जांच कानून द्वारा सीमित नहीं है और वह [2023] 7 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

जब एक पूरा हो जाता है तो दूसरा शुरू हो सकता है

अधिक जानकारी प्राप्त हुई "। .

43. दिवाकर के मामले में पुरानी संहिता के तहत बार-बार जांच करने के पुलिस के अधिकार को मान्यता देने के बाद, तीन-न्यायाधीश

एच. एन. रिशबुद बनाम में इस न्यायालय की पीठ। दिल्ली राज्य ने ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 196 में बताया कि

" हालाँकि, यह नहीं माना जाता है कि मुकदमे के दौरान अदालत द्वारा जाँच की अयोग्यता को पूरी तरह से नजरअंदाज किया जाना चाहिए। जब इस तरह के अनिवार्य प्रावधान के उल्लंघन को पर्याप्त रूप से प्रारंभिक चरण में न्यायालय के संज्ञान में लाया जाता है, तो न्यायालय को, संज्ञान लेने से इनकार नहीं करते हुए, अवैधता को ठीक करने और दोष को सुधारने के लिए आवश्यक कदम उठाने होंगे।

एक व्यक्तिगत मामले की परिस्थितियों की आवश्यकता हो सकती है। इस तरह का पाठ्यक्रम पूरी तरह से योजना के चिंतन के बाहर नहीं है

संहिता जैसा कि धारा 202 से दिखाई देती है जिसके तहत शिकायत पर संज्ञान लेते हुए मजिस्ट्रेट आदेश दे सकते हैं

पुलिस द्वारा जाँच। न ही यह कहा जा सकता है कि इस तरह के पाठ्यक्रम को अपनाना विशेष न्यायाधीश की अंतर्निहित शक्तियों के दायरे से बाहर है, जो मुकदमे में प्रक्रिया के उद्देश्यों के लिए वस्तुतः वारंट की सुनवाई करने वाले मजिस्ट्रेट की स्थिति में है।

मामला "।

44. कुछ उच्च न्यायालयों का यह भी विचार था कि धारा 173 के तहत आरोप पत्र प्रस्तुत करने के साथ, पुलिस की शक्ति

अपराध की जाँच करना समाप्त हो जाता है और मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लेना शुरू हो जाता है। उदाहरण के लिए, राज्य v. मेहर सिंह और ओआरएस। 1974 में रिपोर्ट की गई सी. आर. एल. एल. जे. 970, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की एक पूर्ण पीठ ने कहा कि एक बार जब अदालत ने पुलिस द्वारा आरोप पत्र दायर करने पर एक अपराध का संज्ञान लिया तो पुलिस कार्यात्मक अधिकारी बन गई और उसके बाद, पुलिस द्वारा आगे की जांच की अनुमति नहीं थी।

'संज्ञान' लें और पुलिस को मामले की आगे की जांच करने और एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दें। 46. न्यायिक निर्णयों में उक्त विसंगति और विसंगति को विधि आयोग ने अपनी 41 वीं रिपोर्ट में मान्यता दी थी।

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

14.23) और यह सिफारिश की गई कि आगे की जाँच करने के पुलिस के अधिकार की वैधानिक रूप से पुष्टि की जानी चाहिए। तदनुसार, सी. आर. पी. सी. में, धारा 173 (8) पेश की गई, जिसने वैधानिक रूप से पुलिस को सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद आगे की जांच करने का अधिकार दिया। स्पष्ट रूप से, इसने अभी भी मजिस्ट्रेट को पुलिस द्वारा अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद आगे और/या नए सिरे से जांच का निर्देश देने के लिए ऐसी शक्तियां प्रदान नहीं की हैं।

47. सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) खंडित या विच्छेदित हो सकती है।

निम्नानुसारः

(1) उस अपराध के संबंध में आगे की जांच की जा सकती है जिसमें धारा 173 (2) के तहत रिपोर्ट को अग्रेषित किया गया है।

मजिस्ट्रेट; और

(2) आगे की जाँच के दौरान, प्रभारी अधिकारी के पास शक्ति होती है

विहित प्रपत्र में ऐसे साक्ष्य के संबंध में,
(3) उप-धारा (2) से (6) के प्रावधान, जहां तक हो सके, ऐसी आगे की रिपोर्ट या रिपोर्ट के संबंध में लागू होंगे।

सी. आर. पी. सी. की धारा 173 की उप-धारा (1) में प्रावधान है कि प्रत्येक

पुलिस द्वारा जाँच बिना अनावश्यक देरी के पूरी की जाएगी और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (2) में प्रावधान है कि जितनी जल्दी हो सके

पुलिस रिपोर्ट पर अपराध, राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्रपत्र में एक रिपोर्ट। सी. आर. पी. सी. की धारा 173 की उप धारा (2) के तहत, जांच के बाद पुलिस द्वारा एक पुलिस रिपोर्ट (आरोप पत्र या चालान) दायर की जाती है।

पूरा हो गया है।

उप-धारा (2) के तहत एक रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को भेजे जाने के बाद किसी अपराध का। इस प्रकार, जहां पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (2) के तहत आरोप पत्र या चालान दायर किया गया है, वहां भी पुलिस दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (8) के तहत अपराध के संबंध में आगे की जांच कर सकती है। (संदर्भः "डिफरेंट [2023] 7 एस. सी. आर". शीर्षक वाला लेख।

डी. नागेश्वर राव द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के पहलू, Prl.JCJ, मंथानी।)

"आगे की जाँच" शब्द का क्या अर्थ है?

पूरक। " इसलिए, आगे की जाँच "पहले की जाँच की निरंतरता है न कि एक नई जाँच या पहले की जांच को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए शुरू से ही पुनः जांच शुरू की जाएगी।

मजिस्ट्रेट के समक्ष विकल्प क्या हैं जब एक "अंतिम"

रिपोर्ट "दाखिल की गई है?

49. जहाँ भी जांच अधिकारी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) (i) के तहत मजिस्ट्रेट को भेजी गई अंतिम रिपोर्ट उसके सामने रखी जाती है, वहाँ कई परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। रिपोर्ट यह निष्कर्ष निकाल सकती है कि कोई अपराध किसी विशेष व्यक्ति और व्यक्तियों द्वारा किया गया प्रतीत होता है, और ऐसे मामले में मजिस्ट्रेट या तोः

(1) रिपोर्ट स्वीकार करें और अपराध और मुद्दे का संज्ञान लें

प्रक्रिया,

(2) रिपोर्ट से असहमत हो सकते हैं और कार्यवाही को छोड़ सकते हैं या द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट/सामग्री के आधार पर संज्ञान ले सकते हैं

जाँच अधिकारी,

"आगे" के लिए मुख्य विचार क्या है? जाँच "?

50. जैसा कि हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम में देखा गया है। की स्थिति

गुजरात और अन्य ने (2004) 5 एस. सी. सी. 347 में बताया कि आगे की जांच के लिए मुख्य विचार सच्चाई पर पहुंचना और वास्तविक और पर्याप्त न्याय करना है। आगे की जाँच के लिए जाँच एजेंसी के हाथों को केवल देरी के आधार पर नहीं बांधा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, केवल यह तथ्य कि मुकदमे को समाप्त करने में और देरी हो सकती है, आगे की जांच के रास्ते में खड़ा नहीं होना चाहिए यदि यह केंद्रीय जांच के आधार पर होगा।

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

अदालत को सच्चाई तक पहुंचने में मदद करें और वास्तविक और पर्याप्त और प्रभावी न्याय करें।

"आगे की जाँच" और "पुनः जाँच" के बीच का अंतर जाँच "

51. इसमें कोई संदेह नहीं है कि "आगे की जाँच" और "पुनः जाँच" पूरी तरह से एक अलग आधार पर खड़े हैं। रामचंद्रन बनाम। आर. उदयकुमार और अन्य ने (2008) 5 एस. सी. सी. 413 में रिपोर्ट किया, इस न्यायालय ने के. चंद्रशेखर बनाम में अपने पहले के फैसले पर भरोसा करते हुए दोनों के बीच के अच्छे अंतर को समझाया है। केरल राज्य और अन्य ने (1998) 5 एस. सी. सी. 223 में रिपोर्ट किया। हम पैरा 7 और 8 को नीचे उद्धृत करते हैंः

" 7. इस समय संहिता की धारा 173 पर ध्यान देना आवश्यक होगा। उपरोक्त खंड के सरल अध्ययन से यह स्पष्ट है कि जाँच पूरी होने के बाद भी

संहिता की धारा 173 की उप-धारा (2) के तहत, पुलिस को उप-धारा (8) के तहत आगे की जांच करने का अधिकार है, लेकिन नए सिरे से जांच या पुनः जांच नहीं। इस पर प्रकाश डाला गया था

इस न्यायालय द्वारा के. चंद्रशेखर बनाम. केरल राज्य [(1998) 5 एस. सी. सी. 223: 1998 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1291] अन्य बातों के साथ-साथ इसे इस प्रकार देखा गयाः (एस. सी. सी पी. 237, पैरा 24)
" 24. 'आगे' (जब एक विशेषण के रूप में उपयोग किया जाता है) का शब्दकोश अर्थ 'अतिरिक्त; अधिक; पूरक' है। आगे '

इसलिए जांच पहले की निरंतरता है।

इस तथ्य से प्रेरणा लेते हुए कि उप-धारा (8) में स्पष्ट रूप से परिकल्पना की गई है कि आगे की जाँच पूरी होने पर जाँच एजेंसी को मजिस्ट्रेट को एक और 'रिपोर्ट या

रिपोर्ट और ताजा रिपोर्ट या रिपोर्ट नहीं-के बारे में

आगे 'इस तरह की जांच के दौरान प्राप्त साक्ष्य'।

8. कानून की स्थिति को देखते हुए, जैसा कि ऊपर बताया गया है,

पुनर्निरीक्षण या नए सिरे से जांच के लिए उच्च न्यायालय के निर्देश

जांच स्पष्ट रूप से अक्षम्य है। इसलिए हम निर्देश देते हैं

कि नई जांच के बजाय आगे की जा सकती है संहिता की धारा 173 (8) के तहत यदि आवश्यक हो तो जांच। उच्च न्यायालय के निर्देशानुसार सी. बी. सी. आई. डी. द्वारा भी ऐसा ही किया जा सकता है।

अदालत।

"[2023] 7 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

"आगे की जाँच" विषय पर कानून की स्थिति

52. राजा में-सम्राट वी। ख्वाजा नजीर अहमद, वॉल्यूम। एल. एक्स. एक्स. आई. भारतीय अन्य, 203 प्रिवी काउंसिल ने पुलिस की शक्तियों को चित्रित किया। यह इस प्रकार आयोजित किया गया थाः

" जिस प्रकार यह आवश्यक है कि अपराध के प्रत्येक अभियुक्त को न्याय के न्यायालय में स्वतंत्र पहुँच हो, ताकि वह उस अपराध के लिए दोषी नहीं पाए जाने पर विधिवत बरी हो सके जिसके लिए वह दोषी है।

अभियुक्त, इसलिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि न्यायपालिका को उन मामलों में पुलिस के साथ हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जो उनके प्रांत के भीतर हैं और जिनमें कानून उन पर जांच का कर्तव्य अधिरोपित करता है। भारत में, जैसा कि दिखाया गया है, न्यायिक अधिकारियों से किसी भी अधिकार की आवश्यकता के बिना एक कथित संज्ञेय अपराध की परिस्थितियों की जांच करने का पुलिस की ओर से एक वैधानिक अधिकार है, और यह एक दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम होगा, जैसा कि उनके स्वामी सोचते हैं, यदि इन नियमों का प्रयोग करके उन वैधानिक नियमों में हस्तक्षेप करना संभव माना जाना चाहिए।

न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता। के कार्य

न्यायपालिका और पुलिस पूरक हैं, परस्पर व्याप्त नहीं हैं।

और एक देय के साथ व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संयोजन

कानून और व्यवस्था का पालन केवल प्रत्येक को अपने स्वयं के कार्य का प्रयोग करने के लिए छोड़ने से प्राप्त किया जा सकता है, हमेशा, निश्चित रूप से, दंड प्रक्रिया की धारा 491 के तहत स्थानांतरित होने पर न्यायालयों के उचित मामले में हस्तक्षेप करने के अधिकार के अधीन।

बंदी प्रत्यक्षीकरण की प्रकृति में निर्देश देने के लिए कोड।

53. श्री भगवान समरधा श्रीपद वल्लभ वेंकट में

वनंदा महाराज बनाम। ए. पी. और अन्य राज्य (1999) सी 740 में सूचित किया गया था, यह पैरा 10 और 11 में आयोजित किया गया थाः

" 10. अंतिम रिपोर्ट देने के बाद आगे की जांच करने की पुलिस की शक्ति को धारा 173 (8) के तहत मान्यता दी गई है।

दंड प्रक्रिया संहिता। अदालत द्वारा लिए जाने के बाद भी

पुलिस रिपोर्ट के आधार पर किसी भी अपराध का संज्ञान

पहले प्रस्तुत किया गया, यह पुलिस के लिए आगे का संचालन करने के लिए खुला है

जांच पड़ताल की। यह इस न्यायालय द्वारा राम में कहा गया है।

लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) [(1979) 2 एससीसी 322: 1979 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 479: ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1791] उपरोक्त निर्णय द्वारा प्रदान किया गया एकमात्र सवार यह है कि यह वांछनीय होगा कि

पुलिस को अदालत को सूचित करना चाहिए और औपचारिक अनुमति लेनी चाहिए

आगे की जाँच करें।

TATE TRUUGH CENTRAL BUREAU OF INVESTIGAIAN V.मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

11. ऐसी स्थिति में न्यायालय की निर्देश देने की शक्ति

आगे की जाँच करने के लिए पुलिस के पास कोई नहीं हो सकता है

अवरोध। धारा 173 (8) में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह सुझाव दे कि

अदालत ऐसे किसी भी मामले से पहले अभियुक्त को सुनने के लिए बाध्य है।

निर्देशन किया जाता है। अदालत पर इस तरह के किसी भी दायित्व को डालना

केवल अदालत को बोझ से घेरने में परिणाम होगा

सभी संभावित अभियुक्तों की तलाश करने के लिए

सुनने का अवसर। जैसा कि कानून इसकी आवश्यकता नहीं है,

हम मजिस्ट्रेट पर इस तरह के दायित्व का बोझ नहीं डालेंगे।

54. हेमंत धस्माना बनाम। केंद्रीय जांच ब्यूरो

(2001) 7 एस. सी. सी. 536 में एक और रिपोर्ट, यह आयोजित किया गया थाः

" 15. जब रिपोर्ट उप-धारा के तहत दाखिल की जाती है

मजिस्ट्रेट (इस मामले में विशेष न्यायाधीश) को इससे निपटना होता है। अपना न्यायिक विचार प्रदान करके। अगर रिपोर्ट आई है

प्रभाव कि मूल शिकायत में आरोप पाए गए थे

जांच में सच है, या कि कोई अन्य आरोपी और/या

कुछ अन्य अपराधों का भी पता चला, अदालत को फैसला करना है

हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम इस मामले में अपने दिमाग को परेशान करें। पहलू जब रिपोर्ट द्वारा किए गए अपराधों की ओर इशारा किया जाता है

कुछ लोग। लेकिन जब रिपोर्ट आरोपों के खिलाफ होती है

शिकायत में निहित और निष्कर्ष निकाला कि कोई अपराध नहीं

किसी भी व्यक्ति द्वारा किया गया है, यह अदालत के लिए खुला है

शिकायतकर्ता को सुनने के बाद रिपोर्ट स्वीकार करें। आदेश पर जांच शुरू हो गई थी। अगर अदालत को लगता है कि

ऐसी रिपोर्ट का अवलोकन जिसमें कथित अपराध हैं

तथ्य कुछ व्यक्तियों द्वारा किया गया है अदालत के पास शक्ति है

जाँचकर्ता द्वारा किए गए विपरीत निष्कर्षों को नजरअंदाज करना

और यह उन अपराधों का भी संज्ञान ले सकता है जो प्रकट होते हैं इसके तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए प्रतिबद्ध किया गया है

संहिता की धारा 190 (1) (बी)। तीसरा विकल्प है

संहिता की धारा 173 (8) में जोड़ा गया है।

... .

16. यद्यपि उक्त उप-धारा विशिष्ट शब्दों में नहीं है,

अदालत की आगे का आदेश देने की शक्तियों का उल्लेख करें जाँच, पुलिस की आगे [2023] 7 एस. सी. आर. करने की शक्ति।

न्यायालय के कहने पर उसमें परिकल्पित जांच को गति दी जा सकती है। जब ऐसा कोई आदेश किसी अदालत द्वारा पारित किया जाता है, जिसके पास ऐसा करने का अधिकार क्षेत्र होता है, तो इसमें हस्तक्षेप करना पुनरीक्षण शक्तियों का उचित प्रयोग नहीं होगा क्योंकि आगे की जांच केवल उद्देश्यों के लिए होगी।

न्याय की। 55. संघ लोक सेवा आयोग बनाम। एस. पापैया और

(1997) 7 एस. सी. सी. 614 में सूचित आर. एस., यह पैरा 13 में आयोजित किया गया थाः

" इस प्रकार मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए सीबीआई को "आगे की जांच" करने का निर्देश दे सकते हैं। मामले को ध्यान में रखते हुए और साक्ष्य एकत्र करें

अपीलार्थी द्वारा जाँच पर उठाई गई आपत्तियाँ और

जाँच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली "नई" रिपोर्ट धारा 173 की उप-धारा (2) से (6) द्वारा शासित होगा।

सीआरपीसी "। . 56. हसनभाई (ऊपर) मामले में इस न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित कियाः

" 12. संहिता की धारा 173 की उप-धारा (8) आगे की अनुमति देती है।

जाँच, और यहाँ तक कि अदालत के किसी भी निर्देश को अस्वीकार करता है इस प्रकार, यह पुलिस के लिए उचित जांच करने के लिए खुला है, भले ही अदालत ने किसी भी अपराध का संज्ञान लिया हो

पहले प्रस्तुत की गई पुलिस रिपोर्ट की संख्या। इससे भी अधिक, यदि इस मामले में, पुलिस विभाग के प्रमुख भी थे औचित्य या तरीके और प्रकृति से संतुष्ट नहीं

जाँच पहले ही की जा चुकी है।

13. राम लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) [(1979) 2 एससीसी 322: 1979 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 479: ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1791] इस न्यायालय द्वारा यह कहा गया था कि आगे की जांच को केवल इसलिए पूरी तरह से खारिज नहीं किया गया है क्योंकि अदालत द्वारा संज्ञान लिया गया है। जब परीक्षण के दौरान दोषपूर्ण जांच सामने आती है, तो इसे आगे की जांच द्वारा ठीक किया जा सकता है, यदि परिस्थितियाँ इसकी अनुमति देती हैं। यह आम तौर पर वांछनीय होगा और इस मामले में और भी अधिक, कि पुलिस अदालत को सूचित करे और आगे की जाँच करने के लिए औपचारिक अनुमति लें जब

मामले पर चुप रहने के बजाय नए तथ्य सामने आते हैं

केवल एक प्रारंभिक परीक्षण की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए

उचित जाँच के दौरान पाए गए वास्तविक या वास्तविक अपराधों के लिए प्रभावी परीक्षण उतना ही प्रासंगिक, वांछनीय और

TATE TRUGH CENTRAL BUREAU OF INVESTIGAIEN V द्वारा मामले के त्वरित निपटान के रूप में आवश्यक है।

मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

अदालतें। कानून में उपरोक्त स्थिति को देखते हुए, यदि आगे की जांच की आवश्यकता है, तो निश्चित रूप से कानून द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। केवल यह तथ्य कि मुकदमे को समाप्त करने में और देरी हो सकती है, आगे की जांच के रास्ते में खड़ा नहीं होना चाहिए यदि इससे अदालत को सच्चाई तक पहुंचने और वास्तविक और सारगर्भित कार्य करने में मदद मिलेगी।

प्रभावी न्याय।

57. राम लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) ने 979) 2 एस. सी. सी. 322 की सूचना दी, इस न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया:

" 21. जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जो स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से,

पुलिस के आगे की जाँच करने के अधिकार पर रोक लगा दी

मजिस्ट्रेट ने मामले का संज्ञान लिया था। न तो धारा 173 और न ही धारा 190 हमें यह ठहराने के लिए प्रेरित करती है कि मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लेते हुए आगे की जांच करने की पुलिस की शक्ति समाप्त हो गई थी। अभ्यास करें,

प्राधिकरण की सुविधा और प्रधानता, अनुमत नए तथ्यों की खोज पर बार-बार जांच। हमारे विचार में, इसके बावजूद कि एक मजिस्ट्रेट ने 1898 की संहिता की धारा 173 के तहत प्रस्तुत पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान लिया था, आगे की जांच करने का पुलिस का अधिकार समाप्त नहीं हुआ था और जब नई जानकारी सामने आई तो पुलिस जितनी बार आवश्यक हो उतनी बार इस अधिकार का प्रयोग कर सकती थी। जहाँ पुलिस आगे बढ़ना चाहती थी

जाँच के दौरान, पुलिस आगे बढ़ने के लिए औपचारिक अनुमति लेकर अदालत के प्रति अपना सम्मान और सम्मान व्यक्त कर सकती थी

जांच पड़ताल की।

58. आंध्र प्रदेश राज्य में v. ए. एस. पीटर ने (2008) सी383 में प्रतिवेदन दिया, इस न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

" 9. निर्विवाद रूप से, कानून पूर्व लेने को अनिवार्य नहीं करता है

आगे की जाँच के लिए मजिस्ट्रेट से अनुमति।

आरोप पत्र दाखिल करने के बाद भी आगे की जांच करना पुलिस का एक वैधानिक अधिकार है। आगे की जाँच और पुनः जाँच के बीच एक अंतर भी मौजूद है।

जबकि पूर्व अनुमति के बिना पुनर्निरीक्षण है

अनिवार्य रूप से वर्जित है, आगे की जांच नहीं है। "

59. निर्मल सिंह काहलों बनाम। पंजाब राज्य और अन्य (2009) 1 एस. सी. सी. 441 में इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

" 68. धारा के संदर्भ में आगे की जाँच का आदेश

173 (8) अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए राज्य द्वारा संहिता

इसकी धारा 36 के तहत एक अलग आधार पर खड़ा है। द.

जाँच अधिकारी की आगे बढ़ने की शक्ति

अपने वैधानिक अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में जाँच संहिता की धारा 173 (8) और राज्य के कहने पर

धारा 3 के साथ पठित उसकी धारा 36 को ध्यान में रखते हुए

पुलिस अधिनियम, 1861 पर विभिन्न संदर्भों में विचार किया जाना चाहिए। संहिता की धारा 173 (8) एक सक्षम प्रावधान है। केवल

जब किसी अपराध का संज्ञान लिया जाता है, तो विद्वान मजिस्ट्रेट का कुछ कहना हो सकता है। लेकिन, प्रतिबंध लगा दिया गया

न्यायिक विधान द्वारा केवल बनाए रखने के उद्देश्य से है

न्यायपालिका की स्वतंत्रता और निष्पक्षता। वह एक है।

कहने की बात यह है कि अदालत के पास पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र होगा

एक निष्पक्ष जांच सुनिश्चित करने के लिए, जैसा कि एक पीठ द्वारा देखा गया है

सवाल करने के लिए, लेकिन यह कहना अलग बात है कि जांच अधिकारी के पास ऐसा करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा

की स्पष्ट अनुमति के बिना आगे की जांच

मजिस्ट्रेट "।

60. विनय त्यागी (उपरोक्त) में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "आगे

अंतिम रिपोर्ट के समक्ष प्रस्तुत किए जाने के बाद मानसिक साक्ष्यटी. धारा 173 (8) के तहत इस तरह की आगे की जांच पर रिपोर्ट

आर. पी. सी. को पूरक रिपोर्ट कहा जा सकता है।

61. विनय त्यागी (उपरोक्त) में यह अभिनिर्धारित किया गया था किः

" 40.2 . मजिस्ट्रेट के पास "आगे" निर्देश देने की शक्ति होती है।

धारा के संदर्भ में पुलिस रिपोर्ट दर्ज करने के बाद "जांच"

173 (6) कोड से।

एक्सएक्सएक्स

XXX

XXX

40.4 . न तो संहिता की योजना और न ही कोई विशिष्ट

उसमें उपबंध द्वारा ऐसी अधिकारिता के प्रयोग को वर्जित किया गया है -

मजिस्ट्रेट। धारा 173 (2) की भाषा नहीं हो सकती है

मजिस्ट्रेट को इस तरह से वंचित करने के लिए इतना प्रतिबंधात्मक रूप से समझा गया

विशेष रूप से धारा 156 (3) के प्रावधानों के संबंध में शक्तियाँ

TATE TRUUGH CENTRAL BUREAU OF INVESTIGAIAN V.मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

और स्वयं धारा 173 (8) की भाषा। वास्तव में, ऐसी शक्ति को धारा 173 (8) की भाषा में पढ़ना होगा।

40.5 . संहिता एक प्रक्रियात्मक दस्तावेज है, इस प्रकार, इसे एक ऐसा निर्माण प्राप्त करना चाहिए जो न्याय के उद्देश्य और प्राप्त किए जाने वाले विधायी उद्देश्य को आगे बढ़ाएगा। यह खड़ा नहीं होता है

रिपोर्ट दर्ज करने के बाद भी पुलिस को जांच, लेकिन न्यायालय की शक्ति को इस हद तक कम करने का इरादा है कि

यहां तक कि जहां मामले के तथ्य और न्याय का अंत है

माँग, अदालत अभी भी जाँच एजेंसी को निर्देश नहीं दे सकती है

आगे की जाँच करना जो वह अपने दम पर कर सके।

40.6 . यह औचित्यपूर्ण प्रक्रिया रही है कि पुलिस को "आगे" जारी रखने के लिए अदालत की अनुमति लेनी पड़ती है। जाँच करें और पूरक आरोप पत्र दाखिल करें। .....

62. विनूभाई (उपरोक्त) मामले में, इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने मजिस्ट्रेट द्वारा निर्देशित जांच में टालमटोल के मुद्दे को घेरने वाले विवाद को समाप्त करने का प्रयास किया है। यह न्यायालय बोल रहा है

न्यायमूर्ति आर. एफ. नरीमन ने पैरा 38 में कहा हैः

यह कहने के लिए कि एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण जांच से यह निष्कर्ष निकलेगा कि पुलिस के पास शक्ति है, निश्चित रूप से विषय,

धारा 173 (8) के तहत मजिस्ट्रेट की मंजूरी के लिए आगे

जब तक आरोप तय नहीं हो जाते, तब तक अपराध की जाँच करें, लेकिन

मजिस्ट्रेट का पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र अचानक समाप्त हो जाता है

मुकदमे से पहले की कार्यवाही के बीच में, न्याय का उपहास होगा, क्योंकि कुछ मामलों में आगे की मांग की जा सकती है

जाँच ताकि एक निर्दोष व्यक्ति गलत तरीके से न हो

अभियुक्त के रूप में प्रस्तुत किया गया है या कि प्रथम दृष्टया दोषी व्यक्ति को छूट नहीं दी गई है। मजिस्ट्रेट की शक्तियों के बारे में इस तरह के संकीर्ण और प्रतिबंधात्मक दृष्टिकोण के लिए कोई वारंट नहीं है, विशेष रूप से जब ऐसी शक्तियां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (1), धारा 2 (एच) और धारा 173 (8) के साथ पठित धारा 156 (3) के लिए पता लगाने योग्य हैं, जैसा कि ऊपर देखा गया है, और बिल्कुल भी उपलब्ध होगी।

मुकदमे से पहले आपराधिक मामले की प्रगति के चरण

वास्तव में शुरू होता है। यह न्याय के हित में भी होगा।

कि इस शक्ति का प्रयोग मजिस्ट्रेट द्वारा स्वतः किया जाए स्वयं, प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर। क्या आगे

जाँच का आदेश [2023] 7 एस. सी. आर. के भीतर दिया जाना चाहिए या नहीं।

विद्वान मजिस्ट्रेट का विवेकाधिकार जो प्रत्येक मामले के तथ्यों पर और कानून के अनुसार इस तरह के विवेकाधिकार का प्रयोग करेगा। यह भी स्पष्ट किया गया कि "जांच" की बात की गई है। धारा 156 (3) में पूरी प्रक्रिया शामिल होगी, जो

साक्ष्य के संग्रह के साथ शुरू होता है और तब तक जारी रहता है

न्यायालय द्वारा आरोप तय किए जाते हैं, जिस स्तर पर मुकदमा चलाया जा सकता है

कहा जा सकता है कि शुरुआत हो गई है। .

63. इस प्रकार, इस न्यायालय ने निष्कर्ष में कहा कि, "जब धारा 156 (3) में कहा गया है कि धारा 190 के तहत सशक्त मजिस्ट्रेट

आदेश "ऐसी जांच", ऐसा मजिस्ट्रेट भी आदेश दे सकता है

धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच, धारा 2 (एच) में निहित "जांच" की परिभाषा के संबंध में की जा रही है।

64. इस प्रकार, इस न्यायालय द्वारा ऊपर उद्धृत विभिन्न निर्णयों में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (8) आगे की जांच की अनुमति देती है, और यहां तक कि किसी भी जांच को रद्द कर देती है।

अदालत से निर्देश, यह पुलिस के लिए उचित आचरण करने के लिए खुला है

जाँच, अदालत द्वारा पहले प्रस्तुत पुलिस रिपोर्ट के आधार पर किसी भी अपराध का संज्ञान लेने के बाद भी।

65. हालांकि, इस अदालत के समक्ष सवाल यह है कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (8) के बाद आगे की जांच की अनुमति देती है।

मजिस्ट्रेट ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट (समापन रिपोर्ट) को स्वीकार कर लिया है। अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से यह तर्क दिया गया है कि समापन रिपोर्ट की स्वीकृति अंततः कार्यवाही को समाप्त कर देगी ताकि जांच एजेंसी को अपराध के संबंध में आगे कोई जांच करने से रोका जा सके।

66. अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि धारा के तहत समापन रिपोर्ट को स्वीकार करने का आदेश

190 (1) (ग) सी. आर. पी. सी. का एक न्यायिक आदेश है न कि एक प्रशासनिक आदेश। कमलापति त्रिवेदी बनाम में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए। की स्थिति

पश्चिम बंगाल ने 1980 (2) एस. सी. सी. 91 में यह प्रस्तुत किया कि जब

पुलिस की अंतिम रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को प्रस्तुत की जाती है और मजिस्ट्रेट एक आदेश पारित करता है (ए) पुलिस की रिपोर्ट से सहमत होना और कार्यवाही दायर करना; या (बी) पुलिस रिपोर्ट से सहमत नहीं होना और यह अभिनिर्धारित करना कि सबूत अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के पास भेजने को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त है और शिकायत किए गए अपराध का संज्ञान लेता है, जैसे कि

आदेश एक न्यायिक आदेश है।

67. हम अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से प्रचार किए गए उपरोक्त निवेदन के साथ एक हैं।

हालांकि, यह किसी भी राज्य को केंद्रीय सर्वेक्षण के माध्यम से नहीं बनाएगा।

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

अंतर। जांच करने की आवश्यकता यह है कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 (1) के तहत अंतिम रिपोर्ट को न्यायिक आदेश स्वीकार करने वाला आदेश दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 12 के तहत वैधानिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए वर्तमान मामले की तरह पुलिस या सीबीआई द्वारा आगे की जांच पर रोक लगाएगा?

68. राजस्थान राज्य में v. अरुणा देवी और अन्य ने (1995) 1 एस. सी. सी. 1 में प्रतिवेदित किया, प्रतिवादियों के खिलाफ आई. पी. सी. की विभिन्न धाराओं के तहत मुन्सिफ और न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, बिलारा की अदालत में एक शिकायत दर्ज की गई थी। आरोप की गंभीरता यह थी कि प्रत्यर्थियों ने एक साजिश के तहत कुछ भूमि हस्तांतरित की थी। जाली हस्ताक्षर वाली विशेष शक्ति वकील की शक्ति। मजिस्ट्रेट ने शिकायत को देखने के बाद, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अनुसार जांच करने का निर्देश दिया। इसके बाद पुलिस द्वारा एक मामला दर्ज किया गया और 18.07.1981 पर एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई जिसमें कहा गया कि शिकायत झूठी थी। मजिस्ट्रेट ने 23.09.1981 पर रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया। हालाँकि, ऐसा हुआ कि पुलिस अधीक्षक ने स्वतंत्र रूप से 24.09.1981 पर आगे की जांच का आदेश दिया था और अन्य बातों के साथ-साथ पुलिस द्वारा उत्तरदाताओं के खिलाफ धारा 420 और 467 के तहत चालान दायर किया गया था।

आईपीसी. मजिस्ट्रेट ने 25.06.1984 पर संज्ञान लिया। मजिस्ट्रेट के इस अधिनियम को सत्र न्यायाधीश, जोधपुर के समक्ष चुनौती दी गई, जिन्होंने संशोधन को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय में आगे पहुँचने पर, संशोधन की अनुमति दी गई और संज्ञान के आदेश को दरकिनार कर दिया गया। राज्य ने संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपील की।

69. इस न्यायालय ने पैरा 3 और 4 में क्रमशः निम्नलिखित टिप्पणी कीः

3. उच्च न्यायालय के विवादित फैसले के अवलोकन से पता चलता है कि उसने यह विचार रखा कि पुलिस द्वारा प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार किए जाने के बाद मजिस्ट्रेट को संज्ञान लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। अपीलार्थी की ओर से पेश श्री गुप्ता का तर्क है कि यह दृष्टिकोण कानून में गलत है क्योंकि संहिता की धारा 173 (8) आगे अनुमति देती है।

एक रिपोर्ट के बाद एक अपराध के संबंध में जांच उप-धारा (2) प्रस्तुत की गई है। उप-धारा (8) मजिस्ट्रेट को एक और रिपोर्ट भेजने की भी कल्पना करती है।

इस प्रकार आगे की जाँच के लिए कानूनी मंजूरी थी और यदि इस तरह की आगे की जाँच के बाद एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है कि कोई अपराध किया गया था, तो यह मजिस्ट्रेट के लिए स्वीकार करने के लिए खुला होगा।

इस संबंध में उनके संतुष्ट होने पर उसी का संज्ञान।

23] 7 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

4. उत्तरदाताओं के लिए श्री फ्रांसिस, हालांकि, तर्क देते हैं कि मजिस्ट्रेट का आगे की रिपोर्ट दाखिल करने के अनुसार संज्ञान लेने का आदेश मनोरंजक है।

शिकायत जो कानून में अनुज्ञेय नहीं है। कानूनी निवेदन को प्रमाणित करने के लिए, हमें पहले प्रमथ नाथ तालुकदार बनाम के पास भेजा गया है। सरोज रंजन सरकार [1962 पूरक (2) एस. सी. आर. 297: ए. आई. आर 1962 एस. सी 876: (1962) 1 सी. आर. आई. एल. जे. 770], जिसमें इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने इस पहलू पर विचार किया। बहुमत के फैसले के अवलोकन से पता चलता है कि इसने लिया

विचार है कि संहिता की धारा 203 के तहत शिकायत को खारिज करना दूसरी शिकायत के मनोरंजन के लिए कोई बाधा नहीं है। समान तथ्य; लेकिन वही केवल असाधारण परिस्थितियों में किया जा सकता है जिनमें से कुछ में चित्रित किया गया है

निर्णय। इस संबंध में आगे का अवलोकन यह है कि एक नई शिकायत पर विचार किया जा सकता है, अन्य बातों के साथ, जब नया सबूत सामने आता है। वर्तमान मामले में ठीक यही हुआ था, जैसा कि आगे की जांच की जा रही है।

सामग्री सामने आई जिसके कारण आगे की रिपोर्ट दाखिल की गई

यह कहते हुए कि एक मामला बनाया गया था।

इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 11.09.2014 के अपने पहले आदेश में सही ढंग से संदर्भित किया गया है और उस पर भरोसा किया गया है।

70. के. चंद्रशेखर (ऊपर) में यह न्यायालय एक पर विचार कर रहा था

मामला, जहां एक पुलिस निरीक्षक की शिकायत पर, केरल पुलिस द्वारा अपीलार्थियों के खिलाफ अपराधों के लिए मामला दर्ज किया गया था

आधिकारिक गोपनीयता अधिनियम, 1923 की धारा 3 और 4 के तहत दंडनीय, जिसे आई. पी. सी. की धारा 34 के साथ पढ़ा जाता है, इस आरोप पर कि कुछ भारतीयों और विदेशियों के साथ मिलकर उन्होंने भारत की सुरक्षा और संप्रभुता के लिए पूर्वाग्रहपूर्ण कार्य किए थे। जाँच के दौरान, कुछ अन्य व्यक्तियों (अपील के साथ अपील करने वाले) को गिरफ्तार किया गया था। इसके बाद, पुलिस के एक डी. आई. जी., जो जांच करने वाली टीम के प्रमुख थे, ने मामले की जांच सी. बी. आई. से कराने की सिफारिश की। इस तरह की सिफारिश के अनुसरण में, केरल सरकार ने दिनांक 1 की एक अधिसूचना द्वारा दिल्ली विशेष पुलिस प्रतिष्ठान अधिनियम, 1946 (संक्षेप में, 'अधिनियम') की धारा 6 के तहत सी. बी. आई. द्वारा मामले की आगे की जांच के लिए अपनी सहमति दी। तदनुसार, सी. बी. आई. ने जाँच शुरू की। जाँच पूरा होने के बाद, आई. डी. 1 पर, सी. बी. आई. ने सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के तहत अंतिम रूप में अपनी रिपोर्ट दाखिल की, जिसमें कहा गया कि आरोप साबित नहीं हुए थे और झूठे थे।

स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v.

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए, मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त-अपीलार्थियों को आरोपमुक्त कर दिया। इसके बाद, केरल सरकार ने उक्त मामले की जांच के लिए सीबीआई को पहले दी गई सहमति को वापस लेने के लिए एक अधिसूचना जारी की। उक्त अधिसूचना का उद्देश्य राज्य पुलिस अधिकारियों की एक टीम द्वारा मामले की पुनः जांच को सक्षम बनाना था। एक अनिवार्य द्वारा

अधिसूचना दिनांक 08.07.1996, "मामले की पुनः जांच" शब्दों को "मामले की आगे की जांच" शब्दों द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। राज्य सरकार की अधिसूचना दिनांक 27.6.1996 (संशोधित) को उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के सरल अध्ययन से यह स्पष्ट है कि जांच पूरी होने पर उप-धारा (2) के तहत पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी पुलिस को उप-धारा (8) के तहत "आगे" जांच का अधिकार है, लेकिन "नए सिरे से जांच" या "पुनः जांच" का नहीं। शब्दकोश का अर्थ "आगे" (जब एक विशेषण के रूप में उपयोग किया जाता है) "अतिरिक्त; अधिक; पूरक" है। " इसलिए आगे की जांच, पहले की जांच की निरंतरता है।

और पहले की जांच को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए एक नई जांच या पुनः जांच शुरू नहीं की जाएगी। न्यायालय ने इस तथ्य से प्रेरणा ली कि उप-धारा (8) में स्पष्ट रूप से परिकल्पना की गई है कि आगे की जाँच, जाँच एजेंसी को आगे बढ़ाना होगा

सहमति वापस लेने के बावजूद, और यह कि "आगे की जांच" ऐसी जांच की निरंतरता है जो धारा 173 (8) के तहत आगे की पुलिस रिपोर्ट में समाप्त होती है, इसका अनिवार्य रूप से मतलब है कि उक्त मामले में सहमति वापस लेने से राज्य पुलिस को मामले में आगे की जांच करने का अधिकार नहीं मिलेगा। हालाँकि, न्यायालय ने आगे इस प्रकार टिप्पणी कीः " इसे अलग तरीके से कहें तो अगर आगे कोई जांच करनी है, तो यह अकेले सीबीआई ही कर सकती है, क्योंकि इसे राज्य सरकार द्वारा मामले की जांच करने का काम सौंपा गया था। (जोर दिया गया)। इस प्रकार, न्यायालय द्वारा जो अभिनिर्धारित किया गया था वह यह था कि धारा 173 (2) Cr.P.C के तहत रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद पुनर्निरीक्षण या नए सिरे से जांच नहीं की जाती है। अनुमति है। हालांकि, यह स्पष्ट रूप से देखा गया है कि अगर आगे कोई जांच की जानी है, तो यह अकेले सीबीआई ही कर सकती है। दूसरे शब्दों में, आगे की जाँच की जा सकती थी, लेकिन यही काम अकेले सी. बी. आई. द्वारा किया जा सकता था क्योंकि उसे राज्य सरकार द्वारा मामले की जाँच करने का काम सौंपा गया था और उसने जाँच की थी और उसके संबंध में अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की थी।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

71. यू. पी. एस. सी. द्वारा की गई एक शिकायत पर एस. पापैया (ऊपर) में, सी. बी. आई. द्वारा जाँच की गई थी और अंतिम रिपोर्ट थी महानगर के समक्ष सीआरपीसी की धारा 173 के तहत प्रस्तुत किया गया

मजिस्ट्रेट, जिनके समक्ष प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई थी, ने मामले को बंद करने की मांग की। सी. बी. आई. ने यू. पी. एस. सी. द्वारा अनुरोध किए जाने के बावजूद यू. पी. एस. सी. को मामले को बंद करने की अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के बारे में सूचित नहीं किया। मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट ने रिपोर्ट वापस कर दी क्योंकि सी. बी. आई. ने शिकायतकर्ता को नोटिस जारी नहीं किया था, हालांकि सी. बी. आई. ने दावा किया था कि उसने समापन रिपोर्ट दाखिल करने के संबंध में यू. पी. एस. सी. को सूचित कर दिया था। अंतिम रिपोर्ट सी. बी. आई. द्वारा मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट की अदालत में फिर से प्रस्तुत की गई थी।

सी. बी. आई. द्वारा यूपीएससी को भेजे गए नोटिस की प्रति। ऐसा प्रतीत होता है कि मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा वास्तविक शिकायतकर्ता पर नोटिस की सेवा का प्रमाण मांगने के लिए रिपोर्ट फिर से वापस कर दी गई थी। जबकि अंतिम रिपोर्ट जमा करने की कार्यवाही लंबित थी, यूपीएससी ने सीबीआई के निदेशक को एक पत्र संबोधित किया जिसमें कहा गया था कि जांच ठीक से नहीं की गई थी और समापन रिपोर्ट दाखिल करना उचित नहीं था। जबकि यूपीएससी आगे के संचार की प्रतीक्षा कर रहा था

सी. बी. आई. ने उस ओर से, सी. बी. आई. ने समापन रिपोर्ट को फिर से प्रस्तुत किया और विद्वान महानगर मजिस्ट्रेट ने सी. बी. आई. द्वारा प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और उन्हें कोई अवसर प्रदान किए बिना फाइल को बंद कर दिया।

यूपीएससी को अपनी बात रखनी है। समापन रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए अदालत के आदेश के संचार की प्राप्ति पर, यूपीएससी ने विद्वान मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट के समक्ष एक याचिका दायर की जिसमें कहा गया कि शिकायत की ठीक से जांच नहीं की गई थी और उसे अंतिम रिपोर्ट की स्वीकृति के बारे में कोई सूचना नहीं थी। अदालत ने यू. पी. एस. सी. की याचिका को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि उसने आई. डी. 1 पर सी. बी. आई. द्वारा दायर अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया है, क्योंकि यू. पी. एस. सी. ने स्वीकृति पर अपनी आपत्तियां दर्ज नहीं की थीं।

अंतिम रिपोर्ट और इस तरह, यह शिकायत नहीं कर सका। अदालत ने यह भी राय दी कि चूंकि अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने वाला आदेश एक न्यायिक आदेश था न कि एक प्रशासनिक आदेश, इसलिए उसके पास "सही या गलत तरीके से" पारित इस तरह के आदेश की समीक्षा करने की कोई शक्ति नहीं थी और यह कि यूपीएससी एक याचिका दायर कर सकता है।

पुनरीक्षण अदालत से अंतिम रिपोर्ट की स्वीकृति के खिलाफ उचित आदेश की मांग करने वाली पुनरीक्षण याचिका। यूपीएससी द्वारा दायर पुनरीक्षण याचिका को पुनरीक्षण अदालत ने खारिज कर दिया था। इस न्यायालय के समक्ष अपील में यह अभिनिर्धारित किया गया थाः

" 13. अपीलार्थी ने स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v की अपनी विविध याचिका संख्या 2040 के माध्यम से विद्वान मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट के ध्यान में दिनांकित 23.01.1995 संचार की सामग्री लाई।

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

1995 पुनर्निरीक्षण की मांग करते हुए 'लेकिन विद्वान मजिस्ट्रेट,

पहले के आदेश की समीक्षा करने की कोई शक्ति नहीं थी। यहाँ, फिर से विद्वान मजिस्ट्रेट एक गलती में पड़ गए। उसकी आवश्यकता नहीं थी

' उसके आदेश की समीक्षा करें। वह आगे आदेश दे सकता था।

मामले की 'जांच'। ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट ने धारा के प्रावधानों की अनदेखी की

173 (8) जिनका इस तरह की देखभाल करने के लिए अधिनियमित किया गया है

परिस्थितियाँ भी "।

(जोर दिया गया)

72. सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) के प्रावधानों का उल्लेख करने के बाद,

यू. पी. एस. सी. द्वारा जाँच पर उठाई गई आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए मामले की जाँच करें और आगे के साक्ष्य एकत्र करें और जाँच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली "नई" रिपोर्ट सी. आर. पी. सी. की धारा 173 की उप धारा (2) से (6) द्वारा नियंत्रित होगी। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि विद्वान मजिस्ट्रेट अपने द्वारा निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहे कानून और उसके दिनांकित 04.11.1995 आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता है।

73. उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के आलोक में, यह

ऐसा प्रतीत होता है कि यद्यपि धारा 173 के तहत अंतिम रिपोर्ट स्वीकार करने वाला विद्वत मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश एक न्यायिक आदेश है, लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने के लिए उक्त आदेश को वापस लेने, समीक्षा करने या रद्द करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय में कहा गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के प्रावधानों को ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए भी अधिनियमित किया गया है।

74. एन. पी. झरिया बनाम (2007) 7 एस. सी. सी. में सूचित एम. पी. की स्थिति

358 , अपीलार्थी के खिलाफ आय के ज्ञात स्रोतों के अनुपात से अधिक आर्थिक संसाधनों के कब्जे के संबंध में कार्यवाही शुरू की गई थी। जाँच के बाद विशेष पुलिस प्रतिष्ठान (एस. पी. ई.) ने 01.03.1990 पर एक "अंतिम रिपोर्ट" प्रस्तुत की जिसमें अदालत को सूचित किया गया कि अपीलार्थी के खिलाफ कोई अपराध नहीं किया गया था। अंतिम रिपोर्ट को विशेष न्यायाधीश द्वारा 17.04.1990 पर स्वीकार कर लिया गया था। लेकिन उस पर

01.07.1992 , एस. पी. ई. ने विशेष न्यायाधीश के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें आगे की जांच के लिए अनुमति मांगी गई। विशेष न्यायाधीश ने आगे की जांच की अनुमति दी। इसके बाद, राज्य सरकार से 01.03.1995 पर अभियोजन की मंजूरी प्राप्त की गई।

24.07.1995 पर अदालत में दायर किया गया था। अपीलार्थी की ओर से यह आग्रह किया गया कि एक बार अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत हो जाने के बाद आगे की जांच की कोई गुंजाइश नहीं है। अदालत ने कहा कि जहां तक आगे की जांच का संबंध है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) की पृष्ठभूमि में याचिका स्पष्ट रूप से असमर्थनीय है।

75. कारी चौधरी बनाम। एमएस. सीता देवी और अन्य ने (2002) 1 एस. सी. सी. 714, एफ. आई. आर. संख्या 135 में सीता देवी द्वारा दर्ज की गई शिकायत के आधार पर रिपोर्ट दर्ज की और जांच शुरू की गई।

इसके बाद। जाँच के दौरान, पुलिस ने पाया कि पीड़ित सुगनिया देवी की हत्या उसकी सास सीता देवी और उसकी बहू के अलावा अन्य लोगों द्वारा रची गई साजिश के अनुसार की गई थी। इसलिए, पुलिस ने 30.11.1998 पर अदालत को एक रिपोर्ट भेजी जिसमें कहा गया था कि

एफ. आई. आर. सं. 135 में लगाए गए आरोप झूठे थे। पुलिस ने अदालत को सूचित करने के बाद जांच जारी रखी कि उन्होंने 1998 की प्राथमिकी संख्या 208 के रूप में एक और प्राथमिकी दर्ज की है। इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार अभिनिर्धारित कियाः

" 11. विद्वान वकील ने एक वैकल्पिक तर्क अपनाया कि एक बार एफ. आई. आर. संख्या 135 के तहत शुरू की गई कार्यवाही अंतिम रिपोर्ट में समाप्त हो जाने के बाद पुलिस को दूसरी एफ. आई. आर. दर्ज करने और इसे एफ. आई. आर. संख्या 208 के रूप में दर्ज करने का कोई अधिकार नहीं था। बेशक कानूनी स्थिति यह है कि एक ही मामले के संबंध में एक ही आरोपी के खिलाफ दो प्राथमिकियां नहीं हो सकती हैं। लेकिन जब एक ही प्रकरण के संबंध में प्रतिद्वंद्वी संस्करण होते हैं, तो वे आम तौर पर लेते हैं

एक ही जाँच एजेंसी द्वारा दोनों के तहत दो अलग-अलग एफ़. आई. आर. और जाँच की जाएगी। इसके अलावा, अदालत को सौंपी गई रिपोर्ट में इसे एफ़. आई. आर. के रूप में पेश किया गया।

1998 की सं. 208 को एक सूचना के रूप में माना जाना चाहिए। जाँच के दौरान पुलिस द्वारा की गई नई खोज के बारे में अदालत को प्रस्तुत किया गया कि जिन व्यक्तियों का नाम प्राथमिकी संख्या 135 में नहीं है, वे वास्तविक अपराधी हैं। केवल इस आधार पर कार्यवाही को रद्द करना कि अंतिम रिपोर्ट एफ. आई. आर. संख्या 135 में रखी गई थी, कम से कम कहने के लिए, बहुत तकनीकी है। प्रत्येक जाँच का अंतिम उद्देश्य यह पता लगाना है कि क्या अपराध हैं।

कथित रूप से किया गया है और, यदि ऐसा है, तो जिन्होंने किया है

यह।

12. अन्यथा भी, जाँच एजेंसी इससे अछूती नहीं है

किसी अपराध के संबंध में आगे की जाँच से, किसी राज्य के केंद्रीय जांच ब्यूरो के माध्यम से धारा 173 की उप-धारा (2) के तहत एक रिपोर्ट अग्रेषित करने के बावजूद।

हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

पिछला अवसर। यह धारा 173 (8) से स्पष्ट है।

कोड "।

(जोर दिया गया)

76. इस प्रकार, इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों का अवलोकन

जिन मामलों में अंतिम रिपोर्ट (समापन रिपोर्ट) पहले ही प्रस्तुत की जा चुकी थी और स्वीकार की जा चुकी थी, उनमें प्रस्तुत किए जाने से कानून की स्थिति बहुत स्पष्ट हो जाती है कि मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतिम रिपोर्ट रखे जाने और स्वीकार किए जाने के बाद भी, जांच एजेंसी को मामले में आगे की जांच करने की अनुमति है। दूसरे शब्दों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के तहत प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार किए जाने के बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने पर कोई रोक नहीं है। यह भी स्पष्ट है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने से पहले, मजिस्ट्रेट के लिए अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने वाले आदेश की समीक्षा करना या उसे वापस लेना आवश्यक नहीं है।

77. हम अपने अंतिम निष्कर्ष को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत कर सकते हैं:

(i) मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतिम रिपोर्ट रखे जाने के बाद भी

स्वीकार किया जाता है, यह जांच एजेंसी के लिए ले जाने की अनुमति है

मामले में आगे की जांच करें। दूसरे शब्दों में, कोई नहीं है

((ii) धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने से पहले सी. आर. पी. सी. का यह आवश्यक नहीं है कि अंतिम आदेश को स्वीकार करने वाला आदेश

रिपोर्ट की समीक्षा की जानी चाहिए, वापस ली जानी चाहिए या रद्द कर दी जानी चाहिए। ((iv) आगे की जांच केवल पहले की निरंतरता है।

जाँच, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्तों को गिरफ्तार किया जा रहा है

दो बार जांच के अधीन। इसके अलावा, जांच अभियोजन और सजा के बराबर नहीं रखा जा सकता है ताकि गिर जाए

संविधान के अनुच्छेद 20 के खंड (2) के दायरे में।

अतः दोहरे खतरे का सिद्धांत लागू नहीं होगा।

आगे की जाँच के लिए।

(v) सी. आर. पी. सी. में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह सुझाव दे कि अदालत बाध्य है।

आगे के लिए एक आवेदन पर विचार करते समय अभियुक्त को सुनना

सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) के तहत जांच।

वर्तमान का एक वितरण भाग

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

78. अपने निर्णय के पहले भाग में तथ्यों को दर्ज करते समय, हमने सीआरएल में उच्च न्यायालय की एक समन्वित पीठ द्वारा दिनांक 11.09.2014 द्वारा पारित आदेश का संदर्भ दिया है। 2014 का ओ. पी. सं. 6371। वर्तमान निर्णय में जिन सभी कानूनी मुद्दों पर हमने चर्चा की है, उन पर उच्च न्यायालय ने विचार किया और एक तर्कपूर्ण आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि सी. बी. आई. को आगे की जांच करने की अनुमति है और अभियुक्तों की ओर से उठाई गई आपत्तियां कानूनी रूप से टिकाऊ नहीं थीं। हम उच्च न्यायालय द्वारा अपने दिनांक 11.09.2014 के आदेश में की गई कुछ प्रासंगिक टिप्पणियों को उद्धृत करते हैं:

" 5. मेरी राय में, तत्काल मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर, उपरोक्त निर्णय याचिकाकर्ता के लिए कोई मददगार नहीं हैं। उपरोक्त निर्णयों में, अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत को दोहराया गया है कि Cr.P.C की धारा 173 (8) एक पुलिस स्टेशन/सीबीआई के प्रभारी अधिकारी को Cr.P.C की धारा 173 (2) के तहत एक रिपोर्ट अदालत में प्रस्तुत किए जाने के बाद भी आगे की जांच करने में सक्षम बनाती है। अदालत में अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के बाद और मजिस्ट्रेट के लेने के बाद भी आगे की जांच करने की शक्ति

पहले की जांच को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए शुरुआत से ही जांच या पुनः जांच शुरू की जानी चाहिए। यह 2013 में रिपोर्ट किए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले में अच्छी तरह से तय किया गया है 5 - एससीसी-762 (त्यागी बनाम इरशाद अली)। एकमात्र सवार प्रदान किया जाता है कि यह वांछनीय होगा कि पुलिस को सूचित करना चाहिए

अदालत और आगे करने के लिए औपचारिक अनुमति लें

भगवान समरधा श्रीपद वल्लभ वेंकट विश्वदह महाराज बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (ए. आई. आर.) में देखी गई जाँच

1999 - एससी-2332)।

6. यद्यपि आई. डी. 1 की धारा 173 की उप-धारा (8), विशिष्ट शब्दों में, आगे की जांच का आदेश देने के लिए अदालत की शक्तियों का उल्लेख नहीं करती है, फिर भी इसमें परिकल्पित आगे की जांच करने की पुलिस की शक्ति को अदालत के कहने पर गति दी जा सकती है। अतः स्वीकार करते हुए

मजिस्ट्रेट द्वारा अंतिम रिपोर्ट उसे अपराध का संज्ञान लेने से नहीं रोकती है यदि आगे कोई जांच नहीं की जाती है।

सामग्री प्रकाश में आती है। ऐसी स्थिति में, न्यायालय की पुलिस को जांच के केंद्रीय ढांचे के माध्यम से आगे की जांच करने का निर्देश देने की शक्ति V.

मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

कोई अवरोध नहीं हो सकता है। Cr.P.C की धारा 173 (8) में यह सुझाव देने के लिए कुछ भी नहीं है कि अदालत सुनवाई करने के लिए बाध्य है

ऐसा कोई भी निर्देश दिए जाने से पहले अभियुक्त। 7. तत्काल मामले में, प्रत्यर्थी/सी. बी. आई. द्वारा दायर काउंटर में, यह विशेष रूप से कहा गया है कि वर्ष 2013 में, सी. बी. आई. को कुछ जानकारी/सामग्री प्राप्त हुई थी जो मामले को फिर से खोलने की गारंटी देती है।

जांच पड़ताल की। तदनुसार, पुलिस निरीक्षक, सी. बी. आई./ए. सी. बी. ने सी. आर. एल. में याचिका दायर की है। M.P.No.3833/2013 उसी प्रथम सूचना रिपोर्ट के संबंध में, जिसमें कहा गया है कि अभियोजन पक्ष के पास आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्ति रखने के आरोप को साबित करने के लिए नए सबूत हैं। उक्त याचिका को सी. बी. आई. मामलों के प्रधान विशेष न्यायाधीश ने आगे की जांच की अनुमति देते हुए मंजूरी दे दी है।

8. जहाँ तक मजिस्ट्रेट की आगे की जाँच का निर्देश देने की शक्ति का संबंध है, मैं उसे बता सकता हूँ कि संहिता की धारा 156 (3) के तहत मजिस्ट्रेट की आगे की जाँच का निर्देश देने की शक्ति स्पष्ट रूप से एक स्वतंत्र शक्ति है और

पुलिस अधिकारी की शक्ति के साथ टकराव में नहीं खड़ा होता है। धारा के तहत मजिस्ट्रेट को प्रदत्त शक्ति

156 (3) जाँच अधिकारी द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी मजिस्ट्रेट द्वारा संहिता का प्रयोग किया जा सकता है, जिसका अर्थ यह होगा कि मजिस्ट्रेट जांच अधिकारी के निष्कर्ष को स्वीकार नहीं कर सकता है और आगे की जाँच का निर्देश दे सकता है। यह प्रावधान, किसी भी तरह से, संहिता की धारा 173 की उप धारा (8) में दी गई रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी मामले की आगे की जांच करने की जांच अधिकारी की शक्ति को प्रभावित नहीं करता है। इसलिए, इन सभी प्रावधानों पर विचार करते हुए, मेरे विचार में, मजिस्ट्रेट अंतिम रिपोर्ट "समापन रिपोर्ट बनाने" की स्वीकृति के बाद भी जांच को फिर से खोलने का आदेश दे सकते हैं।

9. तत्काल मामले में, विद्वान प्रधान विशेष न्यायाधीश

सी. बी. आई. मामलों के लिए जांच अधिकारी, निरीक्षक, सी. बी. आई./ए. सी. बी. द्वारा दायर याचिका पर विवादित आदेश पारित किया गया है। अब यह स्पष्ट है कि आई. डी. 1 की धारा 173 की उप-धारा (8) जांच अधिकारी को उस मामले में जांच को फिर से खोलने की शक्ति देती है जिसमें अंतिम रिपोर्ट पहले प्रस्तुत की गई थी और जांच पूरी करने के बाद नई रिपोर्ट [2023] 7 एस. सी. आर. होनी चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उप-धारा के तहत विद्वान विशेष न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत किया गया

(2) संहिता की धारा 173। बेशक, यह किया जा सकता है केवल ऐसी ताजा सामग्री पर जो नहीं आई

जाँच अधिकारी का ज्ञान, जबकि वह था

जाँच का संचालन करना और मेरे विचार में, बिल्कुल वही

इस मामले में स्थिति बनी रही।

11. के निर्णय में भी यही दृष्टिकोण लिया गया है

और अन्य (1995-एस. सी. सी.-सी. आर. एल.-1) जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मजिस्ट्रेट द्वारा अंतिम रिपोर्ट की स्वीकृति उसे प्रतिबंधित नहीं करती है।

अपराध का संज्ञान लेने से यदि आगे

जांच में ताजा सामग्री सामने आती है।

12. श्री एन. चंद्रशेखरन, विद्वान विशेष जनता

अभियोजक ने तर्क दिया है कि इसके लिए कोई कानूनी बाधा नहीं है

बंद होने वाले किसी भी मामले की जांच को फिर से शुरू करना

रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है यदि पर्याप्त, ठोस ताजा है

अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए सामग्री। मुझे सब मिल जाता है।

उसकी प्रस्तुतियों में बल। प्रतिद्वंद्वी पर विचार करने के बाद

दोनों पक्षों की दलीलें, मेरी राय है कि

उन तथ्यों का अवलोकन जो निरीक्षक सी. बी. आई./ए. सी. बी. ने एकत्र किए हैं इस मामले से जुड़ी कुछ ताजा सामग्री, जो थी

जाँच अधिकारी के लिए पहले उपलब्ध नहीं है, यह नहीं हो सकता है

कहा कि सी. बी. आई. मामलों के लिए विद्वान प्रधान विशेष न्यायाधीश

फिर से खोलने का आदेश देकर अपने अधिकार क्षेत्र से परे काम किया था मामले की जांच।

13. ऊपर बताए गए कारणों से, मुझे इसमें पूरी ताकत मिलती है

विद्वान विशेष लोक अभियोजक द्वारा उठाए गए विवाद

सीबीआई मामलों के लिए। इसलिए, मुझे इसमें कोई अवैधता नहीं मिलती है

आक्षेपित आदेश जो इसके द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की गारंटी देता है

अदालत "।

(जोर दिया गया)

79. यह बिना कहे चला जाता है कि उपरोक्त निर्णय दिया गया

ई उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश बहुत बाध्यकारी थे

जब सी. आर. एल. हो तो पीठ का गठन करें। ओ. पी. सं. 15873 और 2015 का 11101

ctively और CRL। 2016 के ओ. पी. सं. 411 पर सुनवाई हुई और निर्णय लिया गया।

ई वे मामले हैं, जो अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा दायर किए गए थे

आपराधिक कार्यवाही से भाग लेना।

मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]उच्च न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा किए गए कार्य

हमारे सामने हमला किया गया आदेशः

" 9. वर्तमान आपराधिक मूल याचिकाओं में शामिल कानूनी बिंदु यह है कि क्या संबंधित मजिस्ट्रेट के पास नए सिरे से जांच करने की शक्ति है, विशेष रूप से प्राप्त करने के बाद

समापन रिपोर्ट और परिणामस्वरूप उसी को स्वीकार करना।

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय, एक की शक्ति के संबंध में

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 173 (8) के तहत मजिस्ट्रेट ने ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 3566 (चंद्र बाबू उर्फ मोसेस वी. स्टेट थ्रू द इंस्पेक्टर ऑफ पुलिस एंड अदर) में दिए गए निर्णय पर गहन चर्चा की है। विस्तृत चर्चा के बाद, माननीय सर्वोच्च

न्यायालय ने उक्त के तहत मजिस्ट्रेट की शक्तियों को समाप्त कर दिया है

खंड इस प्रकार हैः

" अब, जब धारा 173 की उप-धारा (2) (i) के तहत मजिस्ट्रेट को पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा भेजी गई रिपोर्ट मजिस्ट्रेट द्वारा विचार के लिए आती है,

दो अलग-अलग स्थितियों में से एक उत्पन्न हो सकती है। रिपोर्ट यह निष्कर्ष निकाल सकती है कि कोई अपराध किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा किया गया प्रतीत होता है और ऐसे मामले में,

मजिस्ट्रेट तीन में से एक काम कर सकता हैः (1) वह रिपोर्ट स्वीकार कर सकता है और अपराध का संज्ञान ले सकता है और प्रक्रिया जारी कर सकता है,

या (2) वह रिपोर्ट से असहमत हो सकता है और छोड़ सकता है

कार्यवाही, या (3) वह धारा 156 की उप-धारा (3) के तहत आगे की जाँच का निर्देश दे सकता है और पुलिस से आगे की रिपोर्ट बनाने की अपेक्षा कर सकता है। दूसरी ओर रिपोर्ट में कहा जा सकता है कि,

पुलिस की राय में, ऐसा प्रतीत होता है कि कोई अपराध नहीं किया गया है और जहां ऐसी रिपोर्ट दी गई है, मजिस्ट्रेट के पास फिर से तीन पाठ्यक्रमों में से एक को अपनाने का विकल्प हैः (1) वह रिपोर्ट को स्वीकार कर सकता है और कार्यवाही को छोड़ सकता है, या (2) वह रिपोर्ट से असहमत हो सकता है और यह विचार रखते हुए कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है, संज्ञान ले सकता है।

अपराध और जारी करने की प्रक्रिया, या (3) वह उप-धारा (3) के तहत पुलिस द्वारा आगे की जांच करने का निर्देश दे सकता है। धारा 156 "

11. द्वारा की गई टिप्पणियों के सरसरी पढ़ने से

माननीय सर्वोच्च न्यायालय, यह स्पष्ट है कि [2023] 7 एस. सी. आर. प्राप्त करने के बाद।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उक्त संहिता की धारा 173 (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट, संबंधित मजिस्ट्रेट के पास लेने की शक्ति है

उक्त संहिता की धारा 173 (8) के अनुसार आगे की जांच करने के लिए जांच एजेंसी को संज्ञान लेना या निर्देश देना।

12. संहिता की धारा 173 और इसके उपखंडों को केवल पढ़ने से भी यह पता चलता है कि अंतिम रिपोर्ट प्राप्त करने के बाद, संबंधित मजिस्ट्रेट को यह अधिकार प्राप्त है कि

उक्त संहिता की धारा 173 के उपखंड (खंडों) में परिकल्पित रूप से आगे की जांच प्रदान करना।

13. लेकिन, वर्तमान याचिकाओं में शामिल कानूनी स्थिति अलग है। कानूनी मुद्दा यह है कि क्या अंतिम रिपोर्ट के साथ-साथ प्रथम सूचना रिपोर्ट को बंद करने के बाद, क्या संबंधित मजिस्ट्रेट के पास अनुमति देने की शक्ति है

या तो आगे की जाँच/पुनः जाँच/डी

नए सिरे से जांच।

14. इस मोड़ पर, "आगे की जांच" के वास्तविक शब्दकोश अर्थ पर गौर करना समीचीन होगा। 'आगे' (जब एक विशेषण के रूप में उपयोग किया जाता है) का शब्दकोश अर्थ अतिरिक्त है; अधिक; पूरक '। आगे 'इसलिए जाँच पहले की जाँच की निरंतरता है न कि एक नई जाँच।

पहले की जाँच को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए शुरू से ही जाँच या पुनः जाँच शुरू की जानी चाहिए। इसलिए, यह स्पष्ट है कि आगे की जांच करने की अनुमति देने के लिए एक जांच लंबित होनी चाहिए या इसे संक्षेप में रखने के लिए, संबंधित अदालत के समक्ष कुछ कार्यवाही लंबित होनी चाहिए। यह भी कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि उक्त संहिता की धारा 173 के उपखंड (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के बाद, जब मामला लंबित है, जांच अधिकारी कुछ और सामग्री एकत्र कर सकता है ताकि संबंधित आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोप को मजबूत किया जा सके।

15. जैसा कि पहले कहा गया है, तत्काल मामले में याचिकाकर्ताओं का मुख्य तर्क यह है कि आरोपी 1 और 2 के खिलाफ पहले ही जांच की जा चुकी है और इससे पहले एक समापन रिपोर्ट दायर की जा चुकी है सी. बी. आई. मामलों के लिए प्रधान विशेष न्यायाधीश, चेन्नई और

इसे स्वीकार कर लिया गया है और इसके परिणामस्वरूप, प्रथम सूचना रिपोर्ट की खुराक दी गई है।

उक्त परिस्थितियों में, केंद्रीय जांच ब्यूरो V के माध्यम से।मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

अनुमति देना या तो आगे की जांच करने के लिए या 'पुनः जांच' उत्पन्न नहीं होती है।

एक्सएक्सएक्स

XXX

XXX

20. उल्लिखित आदेश पारित होने के चार साल बीत जाने के बाद

वर्ष 2013 को छोड़कर, प्रतिवादी ने, याचिकाकर्ता के रूप में, 2013 की Crl.M.P.No.3833, प्रिंसिपल स्पेशल की फाइल पर दायर की है।

सी. बी. आई. मामलों की अदालत, चेन्नई, यहाँ, अनुमति देने का अनुरोध किया जाता है

याचिकाकर्ता को उपरोक्त मामले को फिर से खोलने और आगे की जांच करने के लिए।

एक्सएक्सएक्स

XXX

XXX

23. विद्वान विशेष लोक अभियोजक ने अपना पूरा तर्क केवल पारित आदेश के आधार पर आगे बढ़ाया है।

2014 की आपराधिक मूल याचिका No.6371। वास्तव में, 2014 के Crl.O.P.No.6371 में आदेश पारित करने का समय,

उपर्युक्त निर्णय को नहीं लाया गया है

इस न्यायालय का ज्ञान। उक्त परिस्थितियों में, इस अदालत ने गलती से सी. बी. आई. मामलों के लिए प्रधान विशेष न्यायाधीश, चेन्नई द्वारा दी गई अनुमति की पुष्टि की है। इसलिए, 2014 के Crl.O.P.No.6371 में पारित आदेश के आधार पर

इस अदालत द्वारा, हम इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकते हैं कि सी. बी. आई. मामले, चेन्नई के प्रधान विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश कानून में मान्य है। इसके अलावा, यह पहले ही बताया जा चुका है कि

उक्त आदेश बिना शक्ति के भी पारित किया गया है। चूँकि उक्त आदेश पूरी तरह से कानून के लिए अलग है, इसलिए बाद की कार्यवाही भी कानून की दृष्टि से खराब है।

24. 2015 के कैलेंडर मामले No.13 में दायर अंतिम रिपोर्ट को रद्द करने की प्रार्थना करते हुए वर्तमान याचिकाएं दायर की गई हैं। तब से प्रधान विशेष द्वारा पुनः जाँच या आगे की जाँच करने के लिए प्रत्यर्थी को दी गई अनुमति

सी. बी. आई. मामलों के लिए न्यायाधीश, चेन्नई पूरी तरह से अवैध है और चूंकि बाद की कार्यवाही भी कानून में पूरी तरह से खराब है, इसलिए यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उस पर दायर अंतिम रिपोर्ट भी तथ्यात्मक और कानूनी रूप से टिकाऊ नहीं है। उक्त के तहत

परिस्थितियों, पक्ष में उठाया गया कानूनी बिंदु

याचिकाकर्ता के पास वास्तव में स्थायी बल है। केवल उसी आधार पर, इन याचिकाओं को अनुमति दी जा सकती है।

(जोर दिया गया)

23] 7 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

80. इस प्रकार, उच्च न्यायालय की एक को-ऑर्डिनेट बेंच ने वस्तुतः एक अन्य को-ऑर्डिनेट बेंच के फैसले पर अपील की और एक

विपरीत दृष्टिकोण। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपने विवादित आदेश में कहा है कि उच्च न्यायालय ने अपने पहले के आदेश दिनांक 1 में विनय त्यागी (ऊपर) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर विचार करने के लिए छोड़ दिया है और इसलिए, इनक्यूरियम के अनुसार, जबकि विनय त्यागी (ऊपर) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर बहुत अधिक विचार किया गया था और दिनांक 1 के आदेश में संदर्भित किया गया है। इस प्रकार, एक ही विषय और मुकदमेबाजी पर उच्च न्यायालय के समान संख्या वाले अलग-अलग न्यायाधीशों द्वारा दो विपरीत विचार लिए गए हैं।

81. हम यहाँ सावधानी के एक शब्द का विस्तार करना चाहेंगे। जबकि यह एक विद्वान न्यायाधीश के लिए खुला है कि वह एक समन्वित पीठ के दृष्टिकोण से भिन्न हो।

अनुक्रम को कागजों पर एक बड़ी पीठ का संदर्भ देना है

विद्वान मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा गया। विद्वान न्यायाधीश केवल यह नहीं कह सकता कि "उचित सम्मान के साथ, मैं अनुपात से सहमत नहीं हूं" या "निर्णय असंवेदनशीलता के अनुसार है क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय के बाध्यकारी निर्णय पर विचार नहीं किया गया है" और एक विपरीत दृष्टिकोण लेने के लिए आगे बढ़ सकता है जैसा कि विवादित आदेश में किया गया है। इस तरह के दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप समन्वित पीठों की परस्पर विरोधी राय होगी, जिसके परिणामस्वरूप न्यायिक अराजकता पैदा होगी और इस प्रकार यह अनुचित है। यह कुछ अत्याचारी और अस्वीकार्य है।

82. हम उच्च न्यायालय को आधिकारिक परिसमापक v में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों की याद दिला सकते हैं। दयानंद और अन्य ने रिपोर्ट किया

(2008) 10 एससीसी 1. इस निर्णय में, इस न्यायालय ने न्यायिक अनुशासन की मूल बातों के पालन और कानून में पूर्वानुमेयता और निश्चितता की आवश्यकता पर जोर दिया है। उस संदर्भ में, पहले के कुछ निर्णयों का उल्लेख किया गया है कि क्या न्यायालय की एक पीठ ने किसी अन्य समन्वय पीठ के दृष्टिकोण का पालन नहीं किया है, जिस पर निम्नलिखित टिप्पणी की गई है:

" 78. उच्च न्यायालयों की विभिन्न पीठों द्वारा समन्वय के निर्णयों/आदेशों और इससे भी बड़ी पीठों का पालन नहीं करने के कई उदाहरण हैं। कुछ मामलों में, उच्च न्यायालय बिना किसी ठोस कारण के इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून की अनदेखी करने की हद तक चले गए हैं। इसी तरह, ऐसे उदाहरण हैं जिनमें इस न्यायालय की छोटी पीठों ने निम्नलिखित निर्णयों के अनुपात को या तो नजरअंदाज किया है या दरकिनार कर दिया है - संविधान पीठों सहित बड़ी पीठें। ये मामले न्यायिक अनुशासन के नियम का पालन न करने के उदाहरण हैं जो व्यवस्था को बनाए रखने के लिए अनिवार्य है। महादेओलाल कनोडिया बनाम।

डब्ल्यू. बी. के प्रशासक जनरल [एयर टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन V.मेंधरा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

1960 एससी 936: (1960) 3 एस. सी. आर. 578] इस न्यायालय ने कहाः (एयर

पी। 941 , पैरा 19)

" 19 .....

यदि कानून में किसी अन्य चीज़ की तुलना में एक चीज़ अधिक आवश्यक है

बात यह है कि यह निश्चितता की गुणवत्ता है। यह गुण पूरी तरह से गायब हो जाएगा यदि उच्च न्यायालय में समन्वित अधिकार क्षेत्र के न्यायाधीश एक दूसरे के फैसलों को खत्म करना शुरू कर देते हैं। यदि उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ दूसरे खंड पीठ के पिछले निर्णय में अंतर करने में असमर्थ है, और यह विचार रखती है कि

पहले का निर्णय गलत है, अपने आप में उस दृष्टिकोण को प्रभाव देता है जिसका परिणाम पूरी तरह से भ्रम होगा। पद समान होगा।

जहाँ उच्च न्यायालय में अकेले बैठे न्यायाधीश की राय है कि एक अन्य एकल न्यायाधीश का पिछला निर्णय

कानून का सवाल गलत है और इसके बजाय उस दृष्टिकोण को प्रभावी बनाता है। मामले को एक बड़ी पीठ को भेजने का। ऐसे मामले में वकीलों को पता नहीं होगा कि अपने मुवक्किलों को कैसे सलाह दी जाए और उच्च न्यायालय के अधीनस्थ सभी अदालतें खुद को पाएंगी।

के बीच चुनने की शर्मनाक स्थिति में

उनके अपने उच्च न्यायालय के असहमत निर्णय "।

(जोर दिया गया)

79. लाला श्री भगवान बनाम। राम चंद [AIR 1965 SC 1767]

गजेंद्रगडकर, सी. जे. ने कहाः (एयर पी। 1773, पैरा 18)

“ 18. ..... इस बात पर जोर देने की शायद ही आवश्यकता है कि विचार

कि उच्च न्यायालय के पूर्व निर्णय, चाहे खंड पीठ या एकल न्यायाधीश पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है, उसे एकल पीठ के रूप में उस जांच को शुरू नहीं करना चाहिए

न्यायाधीश, लेकिन मामले को एक खंड पीठ को संदर्भित करना चाहिए या, एक उचित मामले में, प्रमुख के सामने प्रासंगिक कागजात रखना चाहिए

न्याय जिससे वह प्रश्न की जांच करने के लिए एक बड़ी पीठ का गठन कर सके। यह निपटने का उचित और पारंपरिक तरीका है।

इस तरह के मामलों के साथ और यह स्वस्थ सिद्धांतों पर आधारित है

न्यायिक शिष्टाचार और औचित्य। यह खेदजनक है कि विद्वान एकल न्यायाधीश वर्तमान मामले में इस पारंपरिक तरीके से अलग हो गए और उन्होंने स्वयं प्रश्न की जांच करने का फैसला किया।

एक्सएक्सएक्स

XXX

एक ही मुद्दे पर एक समन्वय पीठ की और अभिनिर्धारित कियाः (एस. सी. सी पी. 256 , पैरा 33)

" 33. जैसा कि विद्वान एकल न्यायाधीश सहमत नहीं थे

डेविलल मामले में व्यक्त किया गया दृष्टिकोण [डेविलल बनाम। किंकर नर्मदा प्रसाद, 1980 (एम. पी.) की चुनाव याचिका संख्या 9]

न्यायिक अनुशासन बनाए रखने के लिए उचित था, मामले को संदर्भित करने के लिए

एक अलग दृष्टिकोण लेने के बजाय एक बड़ी पीठ के लिए। हम. इसे अफसोस और दुख के साथ नोट करें कि उक्त मार्ग नहीं था

पीछा किया। यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि यदि समन्वय क्षेत्राधिकार की कोई पीठ समन्वय क्षेत्राधिकार की किसी अन्य पीठ से असहमत है, चाहे वह विभिन्न तर्कों के आधार पर हो या

अन्यथा, कानून के प्रश्न पर, यह उचित है कि मामला इसके बजाय मुद्दे के समाधान के लिए एक बड़ी पीठ को भेजा जाए

दो परस्पर विरोधी निर्णयों को संचालित करने के लिए छोड़ने की तुलना में,

उलझन। कानून की निश्चितता का त्याग करना उचित नहीं है। न्यायिक शिष्टाचार, कानूनी औचित्य से कम नहीं आधार बनाता है

न्यायिक प्रक्रिया और इसका हर कीमत पर सम्मान किया जाना चाहिए।

एक्सएक्सएक्स

XXX

XXX

90. हम इस बात से दुखी हैं कि कई बार के बावजूद

विषय पर घोषणाएं, मूल बातों के उल्लंघन से जुड़े मामलों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है

न्यायिक अनुशासन। उच्च न्यायालयों के विद्वान एकल न्यायाधीश और पीठों ने फैसले का पालन करने और उसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया

और समन्वय और उससे भी बड़ी पीठों द्वारा निर्धारित कानून

करने के लिए आधार के रूप में तथ्यों में मामूली अंतर का हवाला देते हुए

तो। इसलिए यह दोहराना आवश्यक हो गया है कि संवैधानिक मूल्यों का अनादर और अनुशासन का उल्लंघन

न्यायिक संस्थान की विश्वसनीयता पर गंभीर प्रभाव पड़ता है

और मौका मुकदमेबाजी को प्रोत्साहित करता है। यह याद रखना चाहिए कि

पूर्वानुमेयता और निश्चितता पिछले छह दशकों में इस देश में विकसित न्यायिक न्यायशास्त्र की एक महत्वपूर्ण पहचान है और देश में परस्पर विरोधी निर्णयों की आवृत्ति में वृद्धि हुई है।

श्रेष्ठ न्यायपालिका व्यवस्था को अपूरणीय नुकसान पहुँचाएगी

जैसे कि जमीनी स्तर पर कोर्ट सक्षम नहीं होंगे

यह तय करें कि कौन से निर्णय सही कानून निर्धारित करते हैं

और किसका पालन किया जाना चाहिए।

स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन v. हेमेंद्र रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

91. हम इसे अपने संवैधानिक ढांचे में जोड़ सकते हैं-प्रत्येक नागरिक संविधान का पालन करना और उसका सम्मान करना कर्तव्य है।

आदर्श और संस्थान। जिन्हें सौंपा गया है

प्रणाली को प्रशासित करने और विभिन्न प्रकार के संचालन का कार्य

राज्य के घटक और जो उसके अनुसार कार्य करने की शपथ लेते हैं

संविधान के साथ और उसी को बनाए रखना है, एक निर्धारित करना है

आदर्श। इस सिद्धांत का अधिक व्यापक रूप से पालन करने की आवश्यकता है। न्यायिक बिरादरी के सदस्यों द्वारा कठोरता जो

संवैधानिक और कानूनी मुद्दे और अधिकारों की रक्षा और संरक्षण व्यक्तियों और पूरे समाज के लिए। अनुशासन उचित है।

न्यायपालिका के प्रभावी और कुशल कार्यकरण के लिए प्रणाली। यदि अदालतें दूसरों को उसके अनुसार कार्य करने का आदेश देती हैं

संविधान और कानून के शासन के प्रावधानों के साथ, यह है

संविधान के उल्लंघन को स्वीकार करना संभव नहीं

उन लोगों द्वारा सिद्धांत जिन्हें कानून निर्धारित करने की आवश्यकता होती है।

(जोर दिया गया)

हमें इस संदर्भ में और कुछ जोड़ने की आवश्यकता नहीं है।

फर्थर के खाते पर मुकदमा चलाएँ

जाँच 83. अभियुक्त की ओर से यह जोरदार रूप से प्रस्तुत किया गया था कि

अगर इतने लंबे समय के बाद आगे की जांच की अनुमति दी जाती है, तो मुकदमे में देरी होगी। आने वाले वर्षों तक, डेमोक्लिस की तलवार को अभियुक्त व्यक्तियों की गर्दन पर लटकाए नहीं रखा जाना चाहिए। ऐसे में

परिस्थितियों में, हमारे सामने यह तर्क दिया गया था कि यह ध्यान में रखते हुए कि यह मुकदमा अब लगभग एक दशक से अधिक पुराना है, अभियुक्त व्यक्तियों पर मुकदमा चलाना उचित नहीं होगा।

84. उपरोक्त संदर्भ में, हम केवल यह कह सकते हैं कि सामान्य

राज्य और समाज भले ही यह किसी व्यक्ति के खिलाफ किया गया हो। आम तौर पर, गंभीर अपराधों में, राज्य द्वारा अभियोजन शुरू किया जाता है और न्यायालय को केवल अभियोजन को खारिज करने की कोई

शक्ति नहीं होती है। देरी के आधार पर। केवल न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में देरी [2023] 7 एस. सी. आर.

अपने आप में मामले को खारिज करने का कोई आधार नहीं है। हालाँकि यह अंतिम निर्णय तक पहुँचने के लिए एक प्रासंगिक परिस्थिति हो सकती है। (देखिएः जापानी साहू बनाम। चंद्रशेखर मोहंती ने (2007) 7 एस. सी. सी. 394 में रिपोर्ट किया।

85. हसनभाई (ऊपर) में निम्नलिखित टिप्पणियाँ की गई हैं -

इस न्यायालय द्वारा आगे की जाँच के संदर्भ में किया गयाः

" 13. ..... यदि आगे की जाँच की आवश्यकता है, तो वही निश्चित रूप से कानून द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। केवल तथ्य

कि मुकदमे के समापन में और देरी हो सकती है

आगे की जाँच के रास्ते में खड़ा नहीं होगा यदि वह होगा अदालत को सच्चाई तक पहुँचने में मदद करें और वास्तविक कार्य करें।

पर्याप्त और साथ ही प्रभावी न्याय। .....

} }

86. इस प्रकार, निष्पक्ष सुनवाई का आश्वासन पहली अनिवार्यता होनी चाहिए।

न्याय के वितरण में। [संदर्भः पुलिस आयुक्त, दिल्ली और एक अन्य v. पंजीयक, दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली ने (1996) 6 एस. सी. सी. 323] में रिपोर्ट दी। विनय त्यागी (ऊपर) में भी निष्पक्ष जाँच की आवश्यकता पर जोर दिया गया है जहाँ इसे निम्नानुसार देखा गया हैः

" 48. अंततः इसका उद्देश्य या महत्व क्या है

आपराधिक में अभिव्यक्ति "निष्पक्ष और उचित जांच"

न्यायशास्त्र? इसका दोहरा उद्देश्य हैः सबसे पहले, जांच

निष्पक्ष, ईमानदार, न्यायपूर्ण और कानून के अनुसार होना चाहिए।

दूसरा, निष्पक्ष जांच पर पूरा जोर देना होगा

अदालत के समक्ष मामले की सच्चाई सामने लाने के लिए

सक्षम अधिकारिता "।

87. पूजा पाल बनाम में निर्णय पर भी संदर्भ दिया जा सकता है।

भारत संघ और अन्य ने (2016) 3 एस. सी. सी. 135 में बताया, जहां भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत निहित मौलिक अधिकारों पर "त्वरित सुनवाई" के संदर्भ में चर्चा की गई थी, जिसे निम्नलिखित तरीके से "निष्पक्ष सुनवाई" के साथ जोड़ा गया थाः

" 83. एक "त्वरित परीक्षण", हालांकि मौलिक का सार

संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित जीवन का अधिकार

"निष्पक्ष परीक्षण" की अवधारणा में भारत का एक साथी है, दोनों

एक न्यायनिर्णायक प्रक्रिया के अविच्छेद्य घटक, से अंतिम के रूप में कानून की एक अदालत द्वारा एक न्यायिक निर्णय में समापन

मध्यस्थ। वास्तव में अधिकार के बीच एक गुणात्मक अंतर है।

त्वरित सुनवाई और निष्पक्ष सुनवाई के लिए ताकि इनकार किया जा सके

पूर्व अपने आप में अभियुक्त के लिए प्रतिकूल नहीं होगा, जब

निष्पक्ष सुनवाई की अनिवार्यता के खिलाफ खड़ा किया गया।

मूल रूप से, स्टेट थ्रू सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन V.एमेंद्रा रेड्डी और एक और। ईटीसी। [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

न्याय न केवल किया जाना चाहिए बल्कि ऐसा प्रतीत भी होना चाहिए कि

किया गया है, एक अदालत के अवशिष्ट क्षेत्राधिकार को निर्देशित करने के लिए

किसी भी निष्पक्ष द्वारा आगे की जाँच या पुनर्निरीक्षण

एजेंसी, राज्य पुलिस द्वारा जांच के बावजूद, होना चाहिए अनिवार्य रूप से लागू किया जाता है यदि वैधानिक एजेंसी पहले से ही प्रभारी है

जाँच अप्रभावी प्रतीत होती है या है

इसका निर्वहन करने में सक्षम नहीं होने का अनुमान या अनुमान

निष्पक्ष रूप से, सार्थक रूप से और फलदायी रूप से कार्य करता है। कारण के रूप में

न्याय को सर्वोच्च शासन करना पड़ता है, कानून की अदालत कम नहीं कर सकती है

स्वयं एक त्यागपत्र और एक असहाय दर्शक होने के साथ

एक के सामने, स्पष्ट रूप से अन्यायपूर्ण पूर्वानुमेय परिणाम

त्रुटिपूर्ण जाँच, रिकॉर्ड करने के लिए औपचारिकताओं को विनम्रता से पूरा करें

एक पूर्व निष्कर्ष। न्याय तब एक हताहत बन जाएगा।

मुकदमे की विचाराधीनता किसी भी तरह से निषेधात्मक नहीं हो सकती है बाधा। प्रासंगिक तथ्य और परिचर

परिस्थितियों का एकल मूल्यांकन और विश्लेषण किया जाना चाहिए।

आगे की जाँच की आवश्यकता पर निर्णय लेना या

सच्चाई को उजागर करने और न्याय पाने के लिए पुनः जांच

दलों को। न्यायालय की प्रमुख चिंता और प्रयास

विधि का उद्देश्य सत्य तथ्यों के आधार पर न्याय प्राप्त करना है जो एक प्रतिबद्ध, हल और एक के माध्यम से पता लगाया जाना चाहिए

सक्षम जाँच एजेंसी। " .

(जोर दिया गया)

दूसरे प्रावधान का गैर-अनुपालन 1988 के अधिनियम की धारा 17

88. 1988 के अधिनियम की धारा 17 का दूसरा प्रावधान निर्देश देता है कि

धारा 13 और 1988 अधिनियम की उप धारा (1) के खंड (ई) के तहत निर्दिष्ट अपराध की जांच पुलिस अधीक्षक के पद से कम के पुलिस अधिकारी के आदेश के बिना नहीं की जाएगी। इस प्रकार, दूसरे परंतुक से, यह स्पष्ट है कि अपराध की जांच का उल्लेख किया गया है।1 1988 के अधिनियम की धारा 13 की उप धारा (1) का खंड (ई) द्वारा भी

खंड (क) से खंड (ग) में उल्लिखित पुलिस अधिकारी या कोई पुलिस अधिकारी

राज्य सरकार द्वारा पहले परंतुक के अनुसार,

केवल पुलिस अधिकारी के आदेश द्वारा किया जाए जो [2023] 7 एस. सी. आर. से कम न हो।

पुलिस अधीक्षक का पद। इस प्रकार, दूसरा परंतुक अभियुक्त लोक सेवक के लिए अतिरिक्त सुरक्षा की प्रकृति का है।

1988 के अधिनियम की धारा 13 (1) (ई) के तहत दंडनीय अपराध की जानकारी और सहमति के बिना एक पुलिस अधिकारी द्वारा जांच के खिलाफ

पुलिस अधीक्षक के पद से नीचे के वरिष्ठ पुलिस अधिकारी का पद। पुलिस अधीक्षक रैंक के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी या रैंक में किसी भी उच्च अधिकारी को ऐसे अपराध के लिए जांच, यदि कोई हो, शुरू करने से पहले एक आदेश पारित करने की आवश्यकता होती है। यह इंगित करने की आवश्यकता नहीं है कि इस तरह की जांच का निर्देश देने से पहले, पुलिस अधीक्षक या उनसे वरिष्ठ अधिकारी को जानकारी पर अपना दिमाग लगाने और इस राय पर आने की आवश्यकता है कि ऐसे आरोपों पर जांच आवश्यक है। अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से यह तर्क दिया गया है कि आरोप पत्र में पुलिस अधीक्षक के पद से कम के पुलिस अधिकारी का ऐसा कोई आदेश नहीं है। हम जाने का प्रस्ताव नहीं करते हैं

वर्तमान मुकदमे में इस मुद्दे पर। यह मुद्दा उच्च न्यायालय के समक्ष भी नहीं उठाया गया था। अन्यथा भी, यह तथ्य का सवाल है और रिकॉर्ड का मामला है। यदि यह अभियुक्त का मामला है कि अभिलेख पर ऐसा कोई आदेश नहीं है, तो मुकदमे के दौरान निचली अदालत को इसका निर्देश दिया जा सकता है। रिकॉर्ड को सत्यापित करना, उस पर गौर करना और कानून के अनुसार इस मुद्दे पर उचित निर्णय लेना निचली अदालत का काम है।

89. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, सी. बी. आई. द्वारा दायर सभी अपीलें सफल हो जाती हैं और इसके लिए अनुमति दी जाती है।

90. उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश एतद्द्वारा दिए गए हैं

एक तरफ रख दें।

91. विशेष न्यायालय अब कानून के अनुसार अभियुक्त व्यक्तियों के मुकदमे के साथ आगे बढ़ेगा।

92. लंबित आवेदनों, यदि कोई हों, का निपटारा कर दिया जाएगा।

अपीलों की अनुमति दी गई।

अंकित ज्ञान

(सहायकः महेंद्र यादव, एलसीआरए)